प्रकृति पर विजय
165
लेखिका
मिनी जे. रेनाल्ड्स
तथा
शालिग्राम वर्म्मा, एम. ए., बी.एस-सी
मिलन ऐण्ड कम्पनी लिमिटेड
बम्बई, मद्रास, लण्डन
मूल्य ॥)
५०८
रेना/प्र

प्रकृति पर विजय

लेखिका

मिनी जे. रेनाल्ड्स

तथा

शालिग्राम वर्म्मा, एम. ए., बी-एस. सी.

मैकमिलन ऐण्ड कम्पनी, लिमिटेड

कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, लण्डन

१९२९

प्रस्तावना

उन्नीसवीं शताब्दी से लेकर आजतक पाश्चात्य देशों में वैज्ञानिक अनुसंधान द्वारा जो चकाचौंध और कौतूहल उत्पन्न करने वाली उन्नति हुई है उसका संक्षिप्त दिग्दर्शन कराने की इस छोटी सी पुस्तक में चेष्टा की गयो है। अंग्रेज़ी भाषा में इस प्रकार की सैकड़ों उत्तम पुस्तकें मौजूद हैं। उन का उपयोग करने से वहां की जनता के जीवन में यह सब बातें समागयी हैं। उन के बच्चे खेल कूद में इस प्रकार की बातों का इतना अधिक ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं जितना हमारे देश के पढ़े लिखे ग्रेजुएट भी मुशकिल से जानते हैं। हिन्दी भाषा में इस प्रकार की किताबों का नितान्त अभाव अनुभव करते हुए इस पुस्तक को प्रस्तुत करने का आयोजन किया गया है। आशा है हमारे देश में भो विज्ञान की उन्नति होने से शीघ्र ही हमें अभ्युदय प्राप्त होगा।

शालिग्राम वर्मा

विषय सूची

पहला अध्याय

आदिम मनुष्य

संसार में बहुत सी विचित्र वस्तुएं हैं। उन सबोंमें मनुष्य बहुत विचित्र है। मानवी सभ्यता का वर्णन बड़ा रोचक और मनोरंजक है। वेदों के प्राचीन काल तथा मिश्रदेश की प्राचीनतम सभ्यता के विकास से भी बहुत पूर्व्व इस का श्रीगणेश होता है। इस प्रारम्भिक काल की कल्पना के लिए हमें उस समय का अनुमान करना पड़ता है जब पृथिवी तल पर मनुष्यों की ऐसी धूमधाम न थी। बड़े बड़े विशाल नगर तो क्या छोटे छोटे दो चार झोपड़ों के गांव भी न थे। चारों तरफ़ जंगल पहाड़ और मैदान दिखायी देते थे। प्रकृति चारों तरफ़ बेखटके स्वराज्य स्थापित किये हुए थी। जंगलों में अनेक बनैले पशुओं का निवास था। इन्हीं के आस पास मनुष्य भी रहते थे। इसी लिए इन का रहन-सहन और व्यवहार भी बहुत कुछ पशुओं जैसा था। वे न तो भोजन बनाना जानते थे और न वस्त्र पहनने का ही उन्हें ढंग था। झोपड़ी बना कर रहना तो उनके लिए बहुत ही कठिन था। जंगली फल, पत्तों और वृक्षों की जड़ों को खा कर वे अपना जीवन निर्वाह करते थे। पशुओं का शिकार कर बहुतों का गुज़ारा उनके मांस से ही होता था। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि उस

समय के मनुष्यों का आकार प्रकार और स्वभाव मध्य आफ्रिकाके बनमानुसों से बहुत विभिन्न न था। इन बनमानुसों और मनुष्यों के पूर्वज एक ही थे। मनुष्य अनेक परिस्थितियों, परिवर्तनों और प्रवृत्तियों के कारण उन्नत करता चला आया है। परन्तु ये बनमानुस जैसे के तैसे ही बने हुए हैं।

उस युग के अनेक पशु अब प्रायः लोप हो गये हैं। विशाल-काय "गिरगट" और "मम्मथ" अब अजायबघर में ही दिखायी पड़ते हैं। पृथिवी खोदने पर उनकी हड्डियों के पिञ्जर प्राप्त हुए हैं। उनके अनुमान से उनका रूप और काय स्थिर कर जो मूर्त्तियां अब अजायबघरों में हैं उनके द्वारा हम अब यही प्रमाणित कर सकते हैं कि ऐसे जीव भी किसी समय पृथिवी पर मौजूद थे। इनके लोप हो जाने का कोई वास्तविक कारण विदित नहीं होता। मनुष्यों ने इन्हें मार डाला या और किन्हीं कारणों से इनकी वंशक्षय हो गयी। इस बात में अवश्य सन्देह होता है कि केवल शिकार से ही इन का सारा वंश कैसे मिट गया। अस्तु इस समय हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि अनेक अज्ञात कारणों से धीरे धीरे इन का लोप हुआ। अन्य पशुओं की अवस्था भी पहले की अपेक्षा अब बहुत बदल गयी है। कुत्ते और गाय के सम्बन्ध में हम कह सकते हैं कि यह सम्भव नहीं कि उस युग में इनके पूर्वज भी ऐसे ही रहे हों। मनुष्यों के पास रह कर और पालतू बनाये जाने के कारण उनमें बड़ा भारी परिवर्तन हो गया है। बनैले पशु जैसे शेर और चीता सदा से जंगल में

ही रहते चले आये हैं और इस लिए इन में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है।

मनुष्य की आदिम अवस्था के सम्बन्ध में विचार प्रगट करने के दो साधन हैं। पहले प्रकार के साधन हैं वे चिन्ह जो उनके मरने पर भी आज तक मौजूद हैं। संसार के सभी देशों में ऐसे पत्थर प्राप्त हुए हैं जिन्हें काट कर, तराश कर अथवा नोकदार बना कर आदिम मनुष्य अपने व्यवहार में लाता था। यह पत्थर के अस्त्र जिस प्रकार बने हुए मिलते हैं उस से विदित होता है कि इनके बनाने का कोई और साधन नहीं हो सकता। लुप्तप्राय जीवों की भांति उस समय के मनुष्यों की हड्डियां और पिञ्जर भी मिले हैं जिनसे उनके आकार-प्रकार, रंग-रूप और चाल ढाल का पता चलता है।

वर्तमान युग के मनुष्य ही दूसरे प्रकार का साधन हैं। इस समय की सभ्यता बहुत उन्नत है। फिर भी पृथिवी के कुछ भागों में ऐसे स्थान अब भी मौजूद हैं जहां के मनुष्यों को देख कर सहज ही में प्रारम्भिक काल के मनुष्यों का अनुमान किया जा सकता है। प्रशान्त महासागर के दक्षिणी भाग में गिलबर्ट टापू में अभी थोड़े ही वर्ष हुए ऐसे जंगली मनुष्य मौजूद थे जो और किसी प्रकार का भोजन न मिलने पर अपने ही साथियों को मार कर खा जाते थे। हमारे ही देश के मालाबार प्रान्त में अब भी कुछ ऐसी असभ्य जातियां हैं जो वृक्षों पर रहती हैं। आफ्रिका और आस्ट्रेलिया के उन प्रान्तों में (जहां अभी तक सभ्य मनुष्यों के क़दम नहीं पहुंचे हैं) ऐसे मनुष्य मौजूद हैं जिन्हें जीवन

निर्वाह सम्बन्धी किसी कला-कौशल का वास्तविक ज्ञान नहीं है। इसी प्रकार की घटनाओं और स्थितियों के आधार पर मानव-जीवन-शास्त्र द्वारा आदिम मनुष्य के इतिहास का परिचय प्राप्त होता है।

दूसरे प्राणियों की अपेक्षा मानवी उन्नति तथा प्रकृति पर विजय पाने का एक आवश्यक कारण यह है कि मनुष्य के हाथ का अंगूठा उसकी अंगुलियों की सीध में नहीं है। अर्थात् मनुष्यों की अंगुलियां जिस तरफ़ चलती हैं उसका अंगूठा उनके विपरीत दिशा में ही घूम सकता है। यही कारण है कि मनुष्य अपने हाथ से चीज़ों को दृढ़ता से पकड़ सकता है और औज़ारों को पकड़ कर अनेक तरह के काम कर सकता है। दूसरे जानवरों के पंजों की बनावट ऐसी नहीं होती। अगर कहीं मनुष्य के हाथ की बनावट भी दूसरे जानवरों के पंजों की तरह होती तो उस के लिए इतनी उन्नति कर लेना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव भी था। अंगूठे की इस विशेष शक्ति के न होने से न तो वह अपनी रक्षा करने के लिए हथियार ही पकड़ सकता और न अपने ऊपर आक्रमण करनेवाले अनेक हिंसक जीवों पर अस्त्र चला सकता। न वह अपने शरीर की रक्षा के लिए वस्त्र बना सकता और न भोजन प्राप्त करने के लिए कुछ चेष्टा कर सकता। मकान
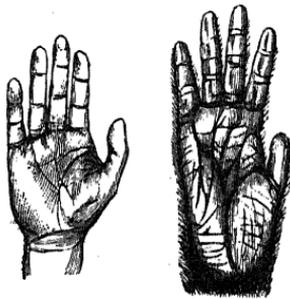
मनुष्य का हाथ

बन्दर का हाथ

बनाना अथवा हज़ारों तरह की और आवश्यक चीज़ें बनाना भी बहुत कठिन होता।

यह बात ठीक है कि केवल अंगूठे ही की इस विभिन्न बनावट की बदौलत मनुष्य ऐसा उन्नतिशील नहीं हुआ है। सभी पशुओं के किसी न किसी प्रकार के अंगूठे होते हैं। बन्दरों के अंगूठे तो मनुष्यों के अंगूठे से मिलते जुलते हैं। यही कारण है कि बन्दर भी मनुष्य की तरह चीज़ों को मज़बूती से पकड़ सकता है और वृक्ष की शाखाओं से फल तोड़ कर खा सकता है। सधे हुए बन्दर तो मनुष्यों की भांति अनेक कार्य्यों को सरलता से कर सकते हैं। वे छुरी कांटे से रोटियां खा सकते हैं, प्याले से पानी पी सकते हैं, कपड़े पहन या उतार सकते हैं। इस सफलता का प्रधान कारण यह भी है कि ईश्वर ने इन बन्दरों को मनुष्य का सा अंगूठा ही नहीं बल्कि हाथ भी दिये हैं। तो भी बन्दरों का अंगूठा बहुत छोटा होता है और जैसा चाहिए वैसा बढ़ा हुआ नहीं होता। इसी से वह वस्तुओं के पकड़ने और ग्रहण करने में मनुष्य की बराबरी नहीं कर सकता।

प्रकृति की विजय का श्रीगणेश उस समय हुआ जब मनुष्य ने लकड़ी का डंडा अथवा पत्थर का नोकीला टुकड़ा उठा कर दूसरे जानवरों को मारा। शेर या चीते की तरह मनुष्य के नोकीले पंजे या तेज़ दांत नहीं होते। हिरन या ख़रगोश की तरह अपने ऊपर आक्रमण करनेवाले जानवरों से बच कर भाग जाने के लिए वह तेज़ भी नहीं दौड़ सकता। तेंदुए की तरह वह छलांग भी नहीं मार सकता और न सांप का

तरह काट कर वह विष फैला सकता है। अपने से बहुत शक्तिशाली हिंसक जीवों से घिरे होने के कारण आदिम मनुष्य बहुत निर्बल और निःसहाय था। ऐसी परिस्थिति में अपनी रक्षा के लिए उसे अस्त्र-शस्त्रों की बड़ा आवश्यकता हुई। मनुष्य और दूसरे पशुओं में सब से बड़ा अन्तर यही है कि मनुष्य अस्त्र-शस्त्र बना सकता है।
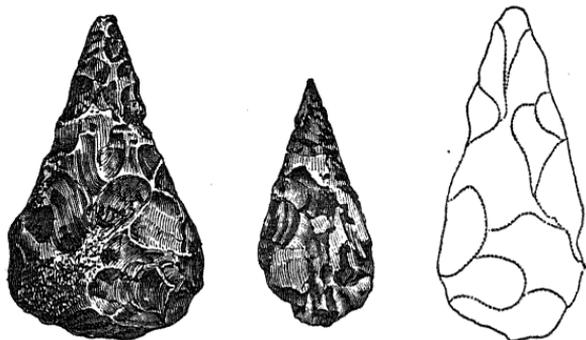
प्रारंभिक युग के चकमक पत्थर के औज़ार

आदिम मनुष्य और दूसरे बनमानुसों में केवल इतना ही भेद न था कि वह अस्त्र-शस्त्र बना सकता था अथवा उनके द्वारा प्रकृति पर विजय प्राप्त कर सकता था। मनुष्य को भांति बनमानुस भी डंडे से मारना तथा पत्थर फेंकना जानते थे। वास्तविक भेद इस बात में था कि मनुष्य ने बहुत पहले ही यह जान लिया कि अगर पत्थर की धार निकाली जाय तो अच्छे और उपयोगी अस्त्र बनाये जा सकेंगे और वह डंडे से तभी अधिक काम ले सकेगा जब उसे तेज़ नोकीले पत्थर से काट छांट लें। उस ने एक डंडा ले कर उसका एक सिरा काट

छांट कर ऐसा बना लिया कि वह उसे सहज ही में दृढ़ता से पकड़ सकता था। दूसरे छोर को मोटा ही रहने दिया। इस प्रकार उसने गदा का आविष्कार किया। अथवा दूसरे सिरे को छांट कर लम्बा नोकीला बना कर बरछा बना डाला।

डंडे की अपेक्षा ये गदा और बरछा दोनों ही बड़े विकराल अस्त्र थे। ऐसा विकराल अस्त्र बना लेना ही मानवी सभ्यता का सब से पहला चमत्कार था। उस आदिम युग से आज
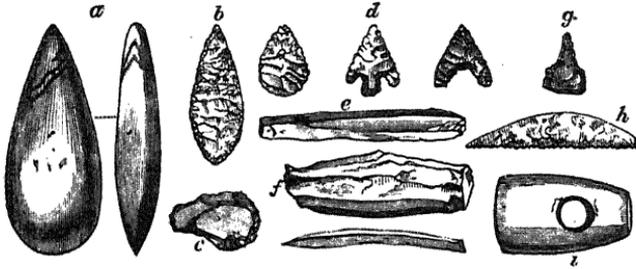
(*a*) पत्थर की कुल्हाड़ी, (*b*) बरछी का फल, (*c*) तीर का फल, (*d*) पत्थर का चाकू, (*e*) पत्थर का हथौड़ा।

दिन पर्यन्त मनुष्य ने अपने अस्त्र-शस्त्र बनाने में उन्नत कर जो कौशल दिखाया है वही उस की सभ्यता के विकास का वास्तविक इतिहास है। इन शस्त्रास्त्रों के बनाने में सभ्यता के विकास के साथ ही साथ जिन वस्तुओं का उपयोग किया गया उन्हीं के नाम से आज दिन वैज्ञानिक संसार उन युगों के नाम से परिचित है।

उस युग को जिस में मनुष्य वास्तव में मनुष्य हो गया था (सीखा पढ़ा बनमानुस नहीं) 'हिम-युग' का नाम

दिया गया है। उस समय का बहुत कम ज्ञान हमें प्राप्त हो पाया है। न तो उस समय की अस्थियां मिलती हैं न पिञ्जर और न खोपड़ियाँ। उस युग में मनुष्य ने किसी प्रकार के हथियार भी नहीं बनाये थे। कई हज़ार वर्ष तक वह युग वर्तमान रहा और उस का जो कुछ हाल हमें मालूम हुआ है वह भूगर्भ-शास्त्र अथवा पृथिवी के इतिहास द्वारा प्राप्त है। मनुष्य के इतिहास का कोई पता नहीं चलता।

दूसरा युग जिस में मनुष्य ने पत्थर के हथियार बनाये 'पाषाण-युग' कहलाता है। इस युग को 'पूर्व पाषाण युग' और 'उत्तर पाषाण-युग' दो भागों में बांटा गया है। कुछ वर्ष हुए इंगलैण्ड के दक्षिण कैन्ट प्रदेश में 'पूर्व पाषाण-युग' के मनुष्य की एक ठठरी मिली थी। संसार भर में यही सब से पहला मनुष्य माना गया है। उसका क़द ठिंगना और रंग काला था और उसके सारे शरीर पर बाल थे। उस की ठोड़ी और नीचे का जबड़ा इतने अधिक बढ़े हुए थे कि वह बिल्कुल बनमानुस की शकल का था। वह बहुत भद्दे पत्थर के औज़ार काम में लाता था। शायद भोजन बनाना और हड्डी की सुइयों से सीना भी सीख गया था।

दूसरे युग के सम्बन्ध में हमारा ज्ञान इस से कुछ अधिक विस्तृत है। हमारे अजायबघरों में दो या तीन ऐसे आदिम मनुष्यों की हड्डियां हैं और इन मनुष्यों के बनाये हुए पत्थर के औज़ार प्रायः संसार के सभी भागों में पाये जाते हैं। थोड़े ही वर्ष गुज़रे कि संसार के कई प्रदेशों में ऐसे मनुष्य मौजूद

थे जो केवल पत्थर के ही औज़ार काम में लाना जानते थे। ये लोहे के औज़ारों से बिल्कुल परिचित न थे। हज़ारों वर्ष तक मनुष्य के अस्त्र-शस्त्र, भाले, चाकू, गदा, बल्लम आदि पत्थर के ही थे और उस समय के आदिकालीन मनुष्यों ने चक़मक़ पत्थर का भी प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया था।

'पाषाण-युग' के बाद बड़ी अद्भुत उन्नति का युग प्रारम्भ हुआ इस का नाम 'धातु-युग' है। सब से पहले तांबा और रांगा इन्हीं दो धातुओं का आविष्कार हुआ। ये दोनों धातु प्रायः शुद्ध पायी जाती हैं। इनका रंग और चमक दमक ऐसी मनोमोहनी थी कि आदिम मनुष्य ने बड़ी प्रसन्नता से इन का व्यवहार शुरू कर दिया। इनका गलाना तथा इनके द्वारा शस्त्रास्त्र बनाना भी सहल था। इतना ही नहीं जितनी देर में लोहे का एक अस्त्र तैयार हो पाता था उतनी ही देर में तांबे के क़रीब १०० अस्त्र बन सकते थे। परन्तु इनमें एक कठिनाई मालूम पड़ी। इन धातुओं को पिघला कर जब इनके अस्त्र तैयार किये गये तो ये बहुत मुलायम निकले। इन पर न धार रक्खी जा सकती थी और न इन से हिंसक जीवों का शिकार किया जा सकता था। ये बहुत जल्द मुड़ कर टूट जाते थे। रांगा तो सबसे गया गुज़रा निकला।

अकस्मात ही इन दोनों धातुओं को मिला कर शस्त्रास्त्र बनाने की विधि सूझ पड़ी। इसी लिए इस युग का नाम 'कांसा-युग' पड़ा। प्रायः संसार भर में मानवी सभ्यता का इतिहास इसी प्रकार आरम्भ हुआ है परन्तु ऐसे भी प्रदेश

हैं जहां के मनुष्यों का विकास 'कांसा-युग' के उन्नति-क्रम तक न पहुंच सका। तस्मानिया और उत्तरी अमेरिका के आदिम निवासी उस समय 'पाषाण-युग' की सभ्यता में रहते थे जब यूरोप-वालों ने पहले पहल उनके देश में पदार्पण किया। महाकवि होमर की गाथाओं में जिन यूनानियों की कथा है उनकी सभ्यता 'कांसा-युग' की सभ्यता से थोड़ी ही अधिक परिष्कृत हो पायी थी। तस्मानिया के आदिम निवासियों और होमर की गाथाओं के पात्रों का वर्णन पढ़ कर हमें स्पष्ट ही विदित हो जाता है कि कांसे के आविष्कार से मानव समाज में क्या क्या परिवर्तन उपस्थित हुए। तस्मानियावाले न घर बनाना जानते थे न कला-कौशल से परिचित थे और न उन में सामाजिक जीवन संगठित हो पाया था। होमर के समय के यूनानी उन से कहीं अधिक सभ्य थे और कई अंशों में तो उनकी सभ्यता बहुत उत्कृष्ट हो गयी थी। 'पाषाण-युग' से 'कांसा-युग' की सभ्यता में यही अन्तर समझना चाहिए।

मानवी सभ्यता के विकास का अन्तिम युग 'लोह-युग' है जो आज दिन भी व्यापक है। लोहा कांसे से बहुत कड़ा होता है और लोहे के शस्त्रास्त्रों की धार भी कहीं अधिक पैनी होती है। लोहे का आविष्कार कर मनुष्यों ने प्रकृति पर कैसी अनुपम विजय प्राप्त की है। कांसे की अपेक्षा लोहे के शस्त्रास्त्र बनाने में मेहनत अधिक पड़ती है। जब लोहा खान में से खोदकर निकाला जाता है तो उसके साथ कई चीज़ें मिली हुई रहती हैं। उन्हें अलग कर शुद्ध लोहा

प्राप्त करने में मनुष्य को बड़े कौशल और ज्ञान की आवश्यकता पड़ी होगी।

'लोह-युग' में प्रवेश करते ही मानवी सभ्यता परमोच्च शिखर पर पहुंचनी प्रारम्भ हुई। इस बात का प्रमाण हैं वे जातियां जो लोहे का उपयोग नहीं जानतीं। जब यूरोपकी जातियों ने पहले पहल आफ्रिका में प्रवेश किया तो उन्हें कुछ ऐसी जातियां मिलीं जो लोहे का उपयोग जानती थीं और कुछ नहीं। लोहे का उपयोग करनेवाली जातियां न करनेवाली जातियां से सभ्यता में कहीं ऊंची थीं। उनके पास बढ़िया हथियार और औज़ार थे। उनके खेत और घर बढ़िया थे और वे उन दूसरी जातियों पर सहज ही में विजय प्राप्त कर सकती थीं।

इस समय संसार की प्रायः सभी जातियों में लोहे का प्रचार हो गया है। थोड़ी सी जंगली जातियां अब भी मौजूद हैं जिन में इस का प्रचार नहीं हो पाया है। लोहा संसार के प्राय: सभी देशों में पाया जाता है। वैज्ञानिक भाषा में आदिम मनुष्य किसी भी युग के मनुष्य के लिए प्रयोग किया जा सकता है। इसी प्रकार जब हम मनुष्य के किसी आविष्कार का वर्णन करते हैं तो यह निश्चितरूप से बतलाना असम्भव है कि वह कौन से युग में हुआ क्योंकि संसार में इस समय भी कई ऐसे प्रदेश हैं जहां 'लौह-युग' की वर्तमान सभ्यता के साथ ही साथ पाषाण और कांस युग की सभ्यता भी व्यापक है। हां यह बात हम निश्चय पूर्वक कह सकते हैं कि

मनुष्य प्रत्येक देश में विभिन्न परिस्थितियों के उपस्थित रहने के कारण प्रायः सभ्यता की इन्ही श्रेणियों द्वारा गुज़र कर वर्तमान सभ्यता को प्राप्त हुआ। इस विकास में सदा वही नियम और वही परिस्थितियां व्यापक रही हैं जिनका संक्षिप्त दिग्दर्शन हम ने ऊपर कराया है।

दूसरा अध्याय

विजय का पहला चरण

हम इस बात पर विचार कर चुके हैं कि प्रारम्भिक युग में मनुष्य अन्य पशुओं से श्रेष्ठ इस लिए था कि उसके हाथ का अंगूठा उंगलियों के सामने होने के कारण विशेष उपयोगी था। परन्तु वह कारण जिसने मनुष्य को अस्त्र-शस्त्र बनाने की शक्ति दे उसे अन्य जीवधारियों पर प्राधान्य दिलाया केवल यह शारीरिक अन्तर नहीं हो सकता। अगर हम मनुष्य की तुलना बनमानुसों से करें तो हमें विदित होगा कि उसके शरीर का प्रत्येक भाग जैसे हाथ, पैर, फेफड़े तथा अन्य अवयव बनमानुसों के शारीरिक अवयवों से कुछ बहुत विभिन्न नहीं हैं। बनमानुस मनुष्य से अधिक बड़ा और शक्तिशाली होता है। मनुष्य की अपेक्षा वह वृक्षों पर अधिक सुगमता से चढ़ सकता है। उसके शरीर पर रोंए इतने अधिक होते हैं कि उसे वस्त्रों की कोई आवश्यकता ही नहीं रहती। इन सब बातों में बनमानुसों को मनुष्यों से अधिक सुविधाएं प्राप्त हैं। परन्तु यह सब होते

हुए भी ईश्वर ने मनुष्य को जो सब से उपयोगी चीज़ दी है उसके सामने सब पशुओं की सब प्रकार की सुविधाएं कुछ भी मूल्य नहीं रखतीं। मनुष्य के लिए यह ईश्वर दत्त देन उसका मस्तिष्क है।
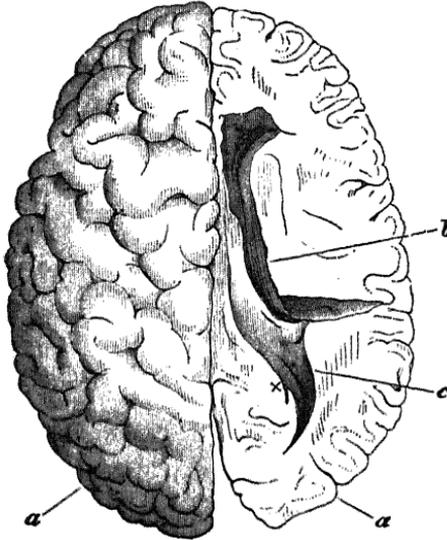
मनुष्य का मस्तिष्क.

जब हम बनमानुसों और मनुष्यों की खोपड़ियों को खोल कर उन के मस्तिष्क का निरीक्षण करते हैं तो साधारण रीति से दोनों में कोई विशेष अन्तर नहीं दीख पड़ता। दोनों का दिमाग़ नरम और भूरे रंग के मांस का लोथड़ा होता है। एक आवश्यक भेद यह होता है कि बनमानुस का दिमाग़ मनुष्य के दिमाग़ से अधिक चिकना होता है। मनुष्य के

दिमाग़ में बनमानुस के दिमाग़ की अपेक्षा बहुत गहरी दरारें और अधिक उठी हुई कगारें मौजूद होती हैं। निश्चित रूप से तो नहीं किन्तु अनुमान यही होता है कि इन्हीं दरारों की गहराई के कारण यह अन्तर पड़ गया है। इस में तो कोई सन्देह नहीं है कि मनुष्य ने अन्य पशुओं पर तथा सारी
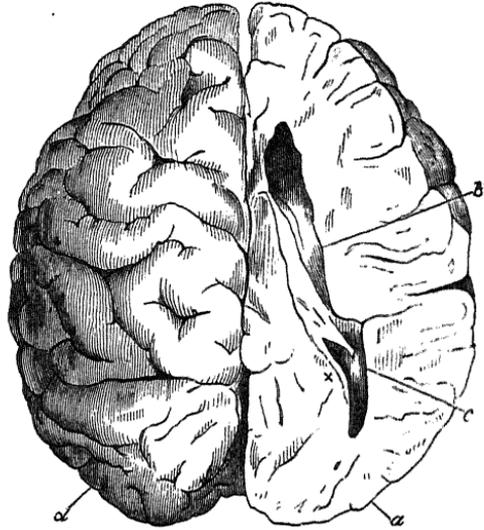
बन्दर का मस्तिष्क

पृथिवी पर विजय इस कारण प्राप्त की है कि उस का मस्तिष्क बहुत परिष्कृत है। मनुष्य जिन चीज़ों का अवलोकन करता है अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा अनुभव कर अपने मस्तिष्क और बुद्धि की शक्तियों द्वारा उनका व्यवहारिक उपयोग करने में सफल होता है। उस में विचार करने की शक्ति है तथा अनुमान

द्वारा वह अनेक बातों की कल्पना कर सकता है। मनुष्य और अन्य जीवधारियों और सभ्य तथा असभ्य मनुष्यों में यही अन्तर है। सभ्य मनुष्य ज्ञानेन्द्रियों द्वारा जिन बातों का अनुभव करता है अपनी बुद्धि द्वारा उस अनुभव का उपयोग कर उसे व्यवहारिक रूप देता है। असभ्य मनुष्य का अनुभव अवश्य होता है परन्तु उसकी बुद्धि परिष्कृत न होने के कारण वह उस का कोई व्यवहारिक उपयोग नहीं कर सकता। मनुष्य के मस्तिष्क की तीक्ष्णता उस की बुद्धि की कुशाग्रता और उस की कल्पना शक्ति की महत्ता ही उस की श्रेष्ठता का प्रमुख कारण हैं।

मनुष्य में आविष्कार करने की शक्ति प्राकृतिक है। सभ्यता के प्रारम्भिक युग में भी इस शक्ति का आभास मिलता है। सन् १७८० ईसवी में हार्म ने कनेडा प्रदेश की खोज निकाला। उस ने अपनी यात्रा के वर्णन में एक किताब लिखी है। केप्टिन हार्म के एक साथी ने एक दिन बर्फ़ के ऊपर एक अजीब तरह की खड़ाऊँ का निशान देखा। इस निशान के सहारे सहारे वे लोग चलते चलते एक आदिम जाति की स्त्री के पास पहुंचे। हार्म के साथी इंडियन उस से बातचीत करने लगे तो उन्हें मालूम हुआ कि एक आक्रमणकारी जाति उसे पकड़ कर ले गयी थी। मौक़ा पा कर वह वहां से भाग निकली और अपने घर जाने के लिए राह खोजने लगी। परन्तु ७ महीने से वह भटकती फिर रही थी और उस ने किसी मनुष्य का मुख न देखा था। उस के पास बन्दूक़ या

किसी प्रकार के शस्त्र नहीं थे परन्तु उसने फन्दे बना कर तीतर और ख़रगोश पकड़ रक्खे थे जिन को खाकर वह जीवन निर्वाह कर रही थी। ख़रगोश के चमड़े के वस्त्र उसने बनाये थे और अपने रहने के लिए एक झोपड़ी भी बना ली थी। एक प्रकार के दो पत्थरों को रगड़ कर उसने अग्नि उत्पन्न की और जलाने के लिए बहुत सा ईंधन इकट्ठा किया हुआ था। इस प्रकार अग्नि उत्पन्न करने में बहुत कठिनाई होने के कारण वह हर समय ईंधन जलाती रहती थी। उस के पास लोहे का एक तीर का फल और एक कड़ा था। इन्हीं दो चीज़ों की सहायता से उसने अपने लिए खड़ाऊं बना लिए थे जिन्हें पहन कर वह बर्फ़ पर ख़ूब अच्छी तरह चल सकती थी। मछलियां पकड़ने के लिए फ़ुर्सत के समय वह बेंत की डोरी बनाती थी। जिस समय इन लोगों से उसकी भेंट हुई वह ६०० फ़ीट डोरी बना चुकी थी। उसका स्वास्थ्य बहुत अच्छा था और वह अपने घर जाने के लिए बहुत उत्सुक थी।

आदिम मनुष्य ने दूसरे जीवों पर सब से पहले अग्नि की खोज कर प्रभुता प्राप्त की होगी। इस बात में बहुत कम सन्देह मालूम होता है। वर्तमान और आदिम मनुष्य में इसी अग्नि के ज्ञान के कारण बड़ा अन्तर हो गया है। आग के बिना पका हुआ भोजन प्राप्त होना असम्भव था। यदि अग्नि का आविष्कार न हुआ होता तो मनुष्य की सारी उन्नति 'पाषाण-युग' तक समाप्त हो जाती और कांसे तथा लौह युग के आने का अवसर

ही न मिलता। प्रायः हमारी सभी वस्तुएं किसी न किसी प्रकार अग्नि द्वारा ही बनायी गयी हैं।

मनुष्य ने सब से पहले अग्नि का आविष्कार किस प्रकार किया इसका रहस्य सदा गुप्त रहेगा। यूनानी लोगों की गाथाओं में लिखा है कि प्रोमोथियस स्वर्गलोक से अग्नि लाया। अन्य प्राचीन जातियों का अनुमान है कि अग्नि विद्युत से उत्पन्न हुई। मालूम होता है कि बिजली गिरने से आस पास के जंगलों में आग लग जाने के कारण ही लोगोंने यह अनुमान किया होगा। आज दिन जितनी असभ्य जातियां अग्नि का उपयोग जानती हैं वे सब इसी प्रकार पत्थरों को या सूखी लकड़ियों को रगड़ कर अग्नि उत्पन्न करती हैं। ये एक लकड़ी के टुकड़े में छेद कर दूसरे टुकड़े को उस में डाल कर उस समय तक घुमाते हैं जब तक अग्नि प्रज्वलित नहीं हो जाती। सभी असभ्य जातियों को यह विधि मालूम है। हम आज तक इस बात का पता नहीं लगा सके कि आदिम मनुष्य ने इसका आविष्कार किस प्रकार किया। ऐसी अवस्था में यही जान लेना काफ़ी है कि मनुष्य ने अग्नि का आविष्कार किया और इसी आविष्कार ने आज दिन उसे सारी प्रकृति का प्रभू बना दिया।

आदिम मनुष्य जातियों में अग्नि को कितना अधिक महत्त्व प्राप्त था वह इस बातसे प्रमाणित होता है कि आज भी प्रायः सभी धर्मों में अग्निदेव का स्थान बहुत ऊंचा है। सभ्यता की आदिम अवस्था में आदिम मनुष्य जिस वस्तु को

बहुत उपयोगी समझते थे वह उनके लिए बहुत पूजनीय हो जाती थी और उनके धार्मिक संगठन में उसे पूज्य स्थान प्राप्त
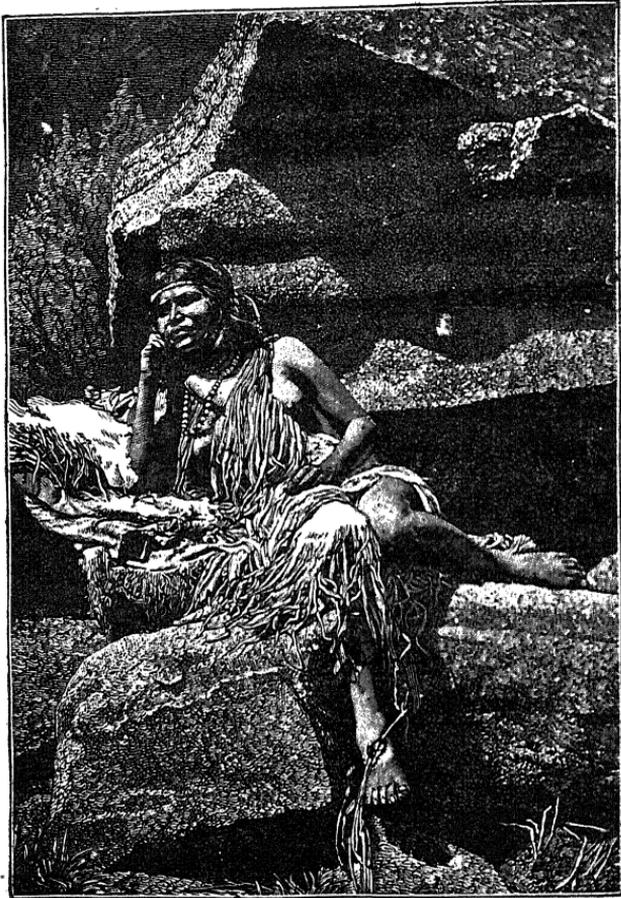
उत्तरी अमेरिका निवासी (आदिम) इण्डियन स्त्री

हो जाता था। यही कारण है कि संसार भर में सूर्य उपासक और अग्नि उपासक जातियां मौजूद हैं। आदिम कालीन मनुष्यों

से ले कर आज दिन पर्यन्त अग्नि प्राय: सभी धार्मिक कार्यों के सम्पादन में आवश्यक अंग समझी जाती है। रोमन सभ्यता के पूर्ण विकास के समय जब रोमन साम्राज्य सारे संसार में परम उन्नतिशाली, परम सभ्य और अपूर्व बलवान था उस समय उन लोगों के यहां अग्न्योपासना परम आवश्यक थी और रोम में सदा पवित्र अग्नि प्रज्वलित रहती थी। सैकड़ों वर्ष तक यह अग्नि प्रज्वलित रही। इस को प्रज्वलित रखने के लिए रोम की परमोच्च कुलों की कुमारियां ब्रह्मचर्य्यव्रत ले कर सदा तत्पर रहती थीं। इन का जीवन इसी पवित्र काम के लिए समर्पित होता था। रोमन लोगों का यह विश्वास था कि जब तक यह पवित्र अग्नि प्रज्वलित रहेगी रोमन साम्राज्य का ह्रास न हो सकेगा। अग्नि ही जातीय जीवन और साम्राज्य का मूर्तिमान स्वरूप थी। अग्नि ही मनुष्य की शक्ति का प्रधान कारण मानी गयी है।

इटली, फ़ारिस, और भारतवर्ष आदि देशों में, तथा संसार के प्रायः सभी धर्मग्रन्थों में जो उत्कृष्ट स्थान अग्नि को दिया गया है उससे यह साफ़ ज़ाहिर होता है कि आदि कालीन सभ्यता की आदिम मनुष्य जातियों में अग्नि की उपयोगिता का क्या मूल्य था। अगर हम विभिन्न भाषाओं में अग्नि के परियायवाची शब्दों का अनुसन्धान करें तो हमें पता चलेगा कि अग्नि और गृह सम्बन्धी शब्द एक ही प्रकार की धातुओं से बने हैं। अंग्रेज़ी में 'फ़ोकस' शब्द का अर्थ है वह स्थान जहां हर चीज़ आ कर एकत्रित हो और लेटिन भाषा में इसी

शब्द का अर्थ अग्निकुण्ड होता है। रोमन सिपाही अपने देश के लिए लड़ाई लड़ते समय जिन शब्दों का व्यवहार करते थे उन का अर्थ यह है। "स्वदेश के अग्निकुण्ड, स्वदेश के गृह तथा स्वदेश के धर्म और अपने गृह की रक्षा के लिए हम अपना जीवन समर्पित करते हैं"।

ऐसा अनुमान किया जाता है कि अग्नि के वास्तविक लाभों के अनुभव के कारण ही स्त्री और पुरुषों में बड़ा विभेद हो गया। अग्नि के आविष्कार के पूर्व स्त्रियां भी पुरुषों की तरह जंगलों में घूम कर शिकार खेलती थीं, मछलियां पकड़ती थीं और मेवे और फल इकट्ठा करती थीं। परन्तु जब यह आवश्यक हुआ कि हर कुटुम्ब में अग्नि प्रज्वलित रहे तो स्त्रीको ही यह कार्य सौंपा गया। इसका एक कारण यह भी था कि उनका शरीर मनुष्यों के शरीर के मुक़ाबिले इतना अधिक शक्तिशाली और बलवान न था और न ही वे बहुत अधिक थकावट झेलने की शक्ति रखती थीं। इसके अतिरिक्त उन्हें बच्चों का भी पालन पोषण करना पड़ता था। बाहर निकलने में उनके लिए सब से बड़ी कठिनाई यह थी कि उनके बच्चे काम करने में बाधा डालते थे। इस लिए जब उन्हें घर पर ही ठहरना पड़ा तो बच्चों की देख भाल और अग्नि प्रज्वलित रखने का कार्य उन के लिए आवश्यक और प्राकृतिक हो जान पड़ा।

एक और महत्व की घटना यह हुई कि बार बार एक जगह से दूसरी जगह अग्नि ले जाने की कठिनाई के विचार से मनुष्य अब एक ही स्थान पर रहने के लिए बाध्य हो गया।

मनुष्य भोजन की तलाश में सारे जंगल में शिकार करता हुआ अपने परिवार और उस की पोषक अग्नि के पास लौट आने के लिए बाध्य हुआ। स्त्री अब अपने परिवार के पालन करने तथा उस परिवार की समृद्धि स्वरूप अग्नि को प्रज्वलित रखने के लिए घर पर ही रहने के लिए बाध्य हो गयी।

वर्तमान की तरह इस प्राचीन समय में भी भोजन बनाना स्त्रियों का ही मुख्य कर्तव्य था। पाकशास्त्र की जन्मदाता स्त्री ही है। संसार के इतिहास में पहले पहल जब मांस पकाया गया होगा तो अवश्य अग्नि की राख में ही उसे भूना गया होगा। हमारा अनुमान है कि उस प्राचीन समय में किसी बड़े बन में आग लग जाने पर जो मनुष्य अपनी जान बचा कर भागे होंगे उन्हें कुछ दिनों शिकारके लिए पशु न मिलने पर भुना हुआ मांस ही खाना पड़ा होगा। और जब उन्हें यह पता चला होगा कि कच्चे मांस से यह अधिक स्वादिष्ट था तो आदिकालीन स्त्री ने अवश्य ही इस बात का अनुभव कर लिया होगा कि मांस में यह स्वाद इस लिए आ गया कि वह आग में भुन चुका था। बस इसी अनुभव को व्यवहार में ला पाकशास्त्र के प्रथम अध्याय का श्रीगणेश हुआ। कुछ समय व्यतीत होने पर आग में भूनने की अपेक्षा किसी डंडी से कच्चा माँस लटका कर भूनने की प्रथा प्रचलित हुई होगी। इस डंडी को चारों ओर घुमा कर मांस अच्छी तरह भूना जा सकता था और इस प्रकार भुनने में उस में राख भी न लगती थी। यही दोनों बातें पहली क्रिया की उन्नति सूचक

हुईं अथवा यहीं से पाकशास्त्र के दूसरे अध्याय का प्रादुर्भाव हुआ।

रसोई बनाने के अतिरिक्त स्त्री ही ने सब से पहले कन्द, मूल फल इकट्ठा कर उस ऋतु के लिए जमा कर रक्खे होंगे जब उनका मिलना कठिन था। इसी प्रकार स्त्री ही ने सब से पहले फल और अनाज बोना प्रारम्भ किया होगा। प्रकृति पर विजय प्राप्त करने में यह भी एक बड़ा महत्वपूर्ण कार्य था कि भोजन सुरक्षित रखने की विधि का अविष्कार हुआ। इस ज्ञान के बिना ठंडे देशों में जहां जाड़े की ऋतु में भोजन की सामग्री दुष्प्राप्य हो जाती है मनुष्य का जीवित रहना बहुत कठिन था।

इसी प्रकार स्त्री ही ने सबसे पहले नाज पीसने का आविष्कार किया। प्रायः सभी आदिम निवासी मनुष्यों में यह प्रथा प्रचलित है कि स्त्रियां ही कूटना पीसना करती हैं और स्त्रियां ही आटे की रोटियां या चपातियां बना कर पकाती हैं। इसी प्रकार प्रायः सभी आदिम निवासियों में यह देखा गया है कि स्त्रियां ही कंद, मूल, फल और अनाज इकट्ठा करके रखती हैं और शीतप्रधान देशों में खाने की बहुत सी चीज़ों को सुरक्षित रखने की विधि से यही लोग खूब परिचित हैं। आफ्रिका में स्त्रियां ही खजूर, मक्का, दाल इत्यादि की खेती करती हैं। एशिया में गेहूं, चावल, मक्का और दाल, अमेरिका में आलू, और मक्का तथा पोलोनेशिया में साबूदाना और कूटू इत्यादि की खेती स्त्रियां ही करती हैं।

इस समय मानवी समाज की यह अवस्था थी कि स्त्रियां घर पर रह कर गृह कार्य करती थीं और मनुष्य जानवरों का शिकार करते,

और मछलियां पकड़ते थे तथा अपने परिवार की रक्षा भी करते थे। आजदिन शिकार खेलना तथा मछली पकड़ना लोगों के शौक़ के कार्य हैं। अब इनसे दिल बहलाव होता है। इस अवस्था में हमलोग तो अवश्य ही यह अनुमान करेंगे कि आदिम समाज में भी यह सब काम आलसी मनुष्यों के लिए हो रहे होंगे। परन्तु जब हम इस बात का विचार करते हैं कि बाणिज्य व्यापार के प्रादुर्भाव तथा किसी विशेष कार्य करने वाली उपजाति के उत्पन्न होनेके पूर्व किसी परिवार को अगर मांस की आवश्यकता होती थी तो उस परिवार के धनी को ही स्वयं जंगल में जाकर जानवरों का शिकार करना पड़ता था तो हमें यह मानना पड़ेगा कि ऐसी परिस्थिति में इस प्रकार के हर एक काम के करने के लिए हर आदमी को विशेष कौशल और बल की आवश्यकता थी और जानवरों को पकड़ने तथा मारने के लिए चाकू, छुरे, जाल, फंदे, तीरकमान तथा शंख, बिगुल, आदि बनाने में मनुष्य ने अपनी आविष्कार करने की शक्ति का बड़ा अपूर्व परिचय दिया होगा।

तीसरा अध्याय

मनुष्य के वस्त्र

जिन वस्तुओं का बनाना मनुष्य ने प्रारम्भिक काल में ही सीखा उन में कपड़ा बनाना भी शामिल है। गर्म देशों के आदिम निवासियों को बहुत कम कपड़ों की ज़रूरत थी। किन्तु ठंडे देशों में तो इनके बिना जीना ही कठिन था। हमारा अनुमान है कि शुरू शुरूमें मनुष्यों ने अपना शरीर ढांकने के लिए वृक्षों के पत्तों का व्यवहार किया होगा। सैंड्विच द्वीपों के आदिम निवासी अब तक घास के घांघरे पहनते हैं। दक्षिणी चीन के टानकिन प्रदेश में जो फ्रांसीसियों की नयी बस्ती है—वहां के आदिम निवासियों के पहनने के सब सामान अर्थात् चोगे, टोपियां आदि ताड़ के पत्तों के बनाये जाते हैं। किन्तु इस प्रकार के वस्त्र ठंडे देशों में जाड़े के दिनों के लिए बिलकुल अनुपयुक्त थे। इसलिए ऐसे देशों के निवासी पशुओं की खालों की पोशाक

सैंड्विच द्वीप की स्त्री

बनाते थे। 'पाषाण युग' के पहले कपड़े बनाने के लिए जिन औज़ार का प्रयोग किया जाता था वे उन जानवरों को हड्डियों के होते थे जिनके चाम के कपड़े बनाये जाते थे। किन्तु पीछे से कुछ औज़ार पत्थर के भी बनने लगे। सुइयां लकड़ी की होती थीं और उनके सिरे पत्थर के चाकुओं से तेज़ कर लिये जाते थे। धागों के स्थान में वृक्षों के रेशे और पशुओं के पट्ठ काम में लाये जाते थे।

ठंडे देशों में मनुष्य ने पहले पशुओं की खाल और रोंओं से शरीर ढांकने का काम लिया। परन्तु इसी समय उसने यह देखा कि भेड़ बकरी और ऊंट इत्यादि जानवरों के बाल अथवा रोंए उसे शीत से बचाने में बहुत उपयोगी हैं। इस बात का अनुभव होते ही हमारे लिए यह अनुमान कर लेना कुछ कठिन नहीं है कि मनुष्य ने भी न रोंओं के वस्त्र बनाने की चेष्टा की होगी। यूरोप में शताब्दियों तक सिर्फ़ ऊनके ही कपड़े पहने जाते थे। ईसामसीह के ५०० वर्ष पूर्व तक यूनान में भी ऊनके ही वस्त्र पहने जाते थे। ऊनके वस्त्र खूब गर्म और सुखद होते हैं। ये बड़े अच्छे मालूम होते हैं और बहुत दिनों तक चलते भी हैं।

ऊन के कपड़े मोटे और गर्म होते हैं। इनका मूल्य भी अधिक होता है। ठंडे देशों में तो ऊनी कपड़ों से काम चल सकता है किन्तु गर्म देशों में इनका इतना अधिक व्यवहार नहीं हो सकता। इन देशों के निवासियों को किसी न किसी ऐसी चीज़ की आवश्यकता प्रतीत होती थी जिस के ठंडे कपड़े बनाये जा सकें। इस काम के लिए पाट या सन बड़ा उपयोगी प्रमाणित हुआ। पाट या सन के आविष्कार द्वारा ही मनुष्य की इस महान् आवश्यकता की कुछ अंशों में पूर्ति

हुई। सन का पेड़ दो फ़ीट से लेकर ५ फ़ीट तक ऊंचा होता है और इस के तने में जो रेशा निकलता है वह बहुत ही मज़बूत और महीन होता है। इसके पेड़ को पानी में गला कर उसका रेशा निकाल लिया जाता है और फिर इस रेशे से बढ़िया मज़बूत और ठंडे कपड़े बनाये जाते हैं।

सब से पहले मिश्र देश में पाट का कपड़ा बनाया जाता था। ईसा के प्रायः चार हज़ार वर्ष पूर्व की बनी हुई मिश्र के बादशाहों की समाधियों में ऐसे चित्र मौजूद पाये गये हैं जिनमें पाट की खेती करते और उस का कपड़ा बुनते हुए लोग दिखाये गये हैं। यह पाट का कपड़ा कई सौ वर्ष पूर्व से जारी है क्योंकि कातने और बुनने के पूर्व यह अनुमान ठीक ही है कि मनुष्य ने हाथ से डोरा भानने की कोई तरकीब अवश्य निकाली होगी। इसी प्रकार टिकली द्वारा कातने और करघे द्वारा बुनने के आविष्कार बहुत पीछे से हुए होंगे।

सन का पौधा

मिश्र देश से ही सन के कपड़े का व्यवहार पश्चिमी देशों में शुरू हुआ। गेहूं और सेब भी उसी प्रकार इन देशों में पहुंचे। चौथी और पाँचवीं शताब्दी में यूनान की स्त्रियां कपास कातना और बुनना जानती थीं। यूनान से यह कला रोम में और रोम से यूरोप के दूसरे पश्चिमी देशों में फैली। अब यूरोप के प्रायः हर देश में सन की खेती होती है। उत्तरी रूस के ठंडे मैदानों में तथा नील नदी का गरम

घाटियों में इस की खेती एक सी ही होती है। इन सब देशों में सैकड़ों वर्ष से स्त्रियां कपड़ा बुनती चली आती हैं। मशीनों द्वारा फ़ेक्टरियों में बुनने की प्रथा तो अभी थोड़े ही समय से प्रचलित हुई है। आयरलैण्ड इस प्रकार के कपड़े बनाने के लिए बहुत प्रसिद्ध है और बेलफ़ास्ट का कपड़ा तो आज दिन समस्त संसार में उत्तम माना जाता है।

पटसन के कपड़े की जगह कपास का सस्ता कपड़ा अब बहुत प्रचलित है। कपास एक प्रकार का झाड़ीदार पौधा है जो एशिया, आफ़्रिका और अमेरिका के जंगलों में उगता है। कपास की बौंडी में बिनौले या बीज होते हैं और उसी के भीतर रुई के गोले भरे होते हैं। भारतवर्ष में कपास की खेती कई हज़ार वर्ष से होती है। मिश्र और संयुक्तराज्य अमेरिका में भी कपास की खेती होती है।

पुराने ज़माने में ही कपास का व्यवहार बहुत अधिक बढ़ गया होता अगर इस के बुनने में अधिक कठिनाई न पड़ती। एक आदमी दिन भर कठिन मेहनत कर अधिक से अधिक सेर भर कपास बीन सकता है। जिस कपड़े के बनाने के लिए एक ही चीज़ के एकट्ठे करने में इतनी कठिनाई हो तो भला उस कपड़े का व्यवहार कैसे लोकप्रिय हो सकता है। यही कारण है कि कुछ समय तक रुई उतनी अधिक व्यवहार में न आ सकी जितनी की आना चाहिए थी। कपास ओटने की मशीन के आविष्कार ने रुई के कपड़े का व्यवहार बहुत अधिक बढ़ा दिया। और इस मशीन के द्वारा बिनौले और

रुई अब इतनी जल्दी साफ़ हो जाते हैं कि सूत का कपड़ा अब संसार में सब से सस्ता हो गया है। जो चीज़ कम

कपास का पौधा

खर्च और कम मेहनत से किफ़ायत के साथ तैयार हो सकती है वह अवश्य सस्ती होगी। इस यंत्र के आविष्कार का यह फल हुआ है कि आज दिन संसार के सभी सभ्य देशों

में सूत का कपड़ा घर घर और बड़ी बहुतायत से मौजूद है। प्रायः सभी प्रकार के कपड़ों में कुछ न कुछ रुई की मिलावट रहती है। कुछ कपड़े रुई और सन से, कुछ रुई और ऊन से और कुछ रुई और रेशम के मेल से बनाये जाते हैं। जो कपड़े ख़ालिस ऊन या रेशम के कहलाते हैं उन में भी कुछ न कुछ रुई की मिलावट अवश्य होती है। अमेरिका में सब से अधिक रुई पैदा होती है किन्तु रुई का कपड़ा बनाने में इंगलिस्तान सब से बढ़ गया है।

सन और कपास वनस्पतियों से प्राप्त होते हैं। ऊन पशुओं के रोंगटों से मिलती है। परन्तु इन सब से अधिक सुन्दर वस्त्र बनाने की चीज़ कीड़ों से प्राप्त होती है। रेशम का कीड़ा होता है। जब इस कीड़े की इल्लियां पैदा होती हैं तो ये अपने चारों ओर एक प्रकार का कोया बना लेते हैं। इसी कोये से रेशम निकाला जाता है। मनुष्य कोये पकड़ें कर उन के धागे निकाल लेते हैं और फिर इन्हीं रेशम के धागों से बड़े सुन्दर और अद्भुत वस्त्र तैयार करते हैं। रेशम के वस्त्र पहले पहल चीन में बनाये गये और वहीं से बहुत दिनों तक अन्य देशों में पहुंचते रहे। भारतवर्ष में भी सैकड़ों वर्ष से रेशम के कीड़े पाले जाते हैं। चीन के कई प्रदेशों में रेशम के कीड़े जंगली अवस्था में पाये जाते हैं और इन्हीं के कोए लोग उठा लाते हैं। रेशम के कीड़े शहतूत के पत्ते खा कर खब बढ़ते हैं। शहतूत भारतवर्ष, चीन, जापान और उत्तरी इटली में बहुत होता है। इसी लिए इन्हीं देशों

का रेशम सब से अच्छा होता है। यूरोप में रेशम के कीड़ों को काश्त बहुत मुश्किलों से हो सकी। चीन अथवा उत्तरी भारत में जो यूरोप के लोग आते थे वे रेशम के इन सुन्दर बेल बूटेदार कपड़ों और साड़ियों इत्यादि को देख कर बहुत प्रसन्न होते थे। पहले पुराने समय में जब रेल न थी तो एक देश का माल दूसरे देश में व्यापारियों के कारवानों द्वारा आता जाता था। चीन से यूनान तक आने जाने में प्रायः १८ महीने लगते थे। यही कारण है कि प्राचीन ग्रीस में बहुत समय तक रेशम के वस्त्र कोई न जानता था। रोम् साम्राज्य के समय यूरोप के बाज़ारों में रेशम का कपड़ा बिकने लगा था।

रोमन बादशाहों के समय में जब यह साम्राज्य बहुत उन्नतिशील अवस्था में था रेशम की मांग बहुत ज़्यादा होने लगी। तब इटली, दक्षिणी फ्रांस और यूनान तथा अन्य देशों में रेशम के कीड़े पैदा करने के लिए शहतूत के वृक्ष लगाये जाने लगे। परन्तु चीनी लोग बड़े अनुदार थे वे रेशम का व्यापार अपने ही हाथ में रखना चाहते थे। सम्राट जस्टीनियन के समय में यूरोप के अन्य देशों में भी रेशम के कीड़े पाले जाने लगे। इसी समय से फ्रांस और इटली में रेशम खूब बनने लगा और आज दिन लायेन्स संसार के उन सब से मशहूर शहरों में है जहां रेशम के बढ़िया वस्त्र बनाये जाते हैं।

पुराने ज़माने में कपड़ा बुनने का हुनर सम्भवतः रस्सियां बटने से प्रारम्भ हुआ होगा और सब से पहले घास या ताड़ के पत्तों की चटाइयां बनायी गयी होंगी। जब मनुष्य ने सन के

कपड़े का आविष्कार किया तो बुनने की कला में भी बड़ी उन्नति हो गयी। हाथ से बुनने में कठिनाई भी बहुत पड़ने लगी और समय भी बहुत अधिक लगने लगा। इस लिए समय और मेहनत दोनों ही की बचत के लिए मनुष्य के मस्तिष्क में बड़ी उलझन उत्पन्न हुई होगी। बड़े प्रयत्न से जब करघे का आविष्कार हुआ तो मनुष्य ने प्रकृति पर विजय पाने के पथ पर एक पैर और आगे बढ़ा दिया।
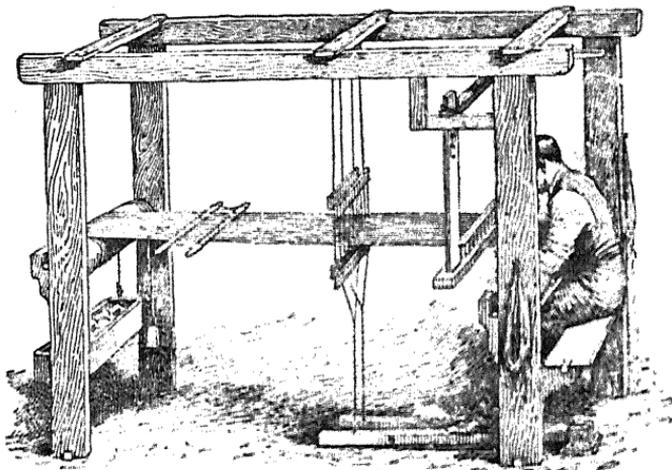
कपड़ा बुनने का करघा

ठंडे देशों में सस्ते कपड़ों की बहुत अधिक आवश्यकता थी। इस लिए जब तक मनुष्य बहुत अधिक समय और मेहनत ख़र्च कर कपड़े बनाने में लगे रहे उस समय कुछ अधिक उन्नति न हो सकी। सैकड़ों वर्षों तक स्त्रियाँ ही बुनने का काम करती रहीं और करघे हाथों से चलाये जाते थे। परन्तु १६ वीं शताब्दी के

आरम्भ में ऐसे करघों का आविष्कार हुआ जो मशीनों द्वारा चलाये जाते थे। इस आविष्कार ने बुनने की कला में बड़ा भारी परिवर्तन उपस्थित कर दिया। यूरोप और अमेरिका में आज दिन कातने और बुनने की मशीनें भाप और बिजली के एंजनों द्वारा ही चलायी जाती हैं। इंग्लैंड में यार्कशायर, संयुक्त प्रदेश अमेरिका में पूर्वी रियासतें तथा जर्मनी, उत्तरी फ्रांस और दक्षिणी रूस, जापान, और भारतवर्ष में बम्बई ये सब संसार के वे प्रसिद्ध प्रदेश हैं जहां मशीनों द्वारा सब से अधिक कपड़ा बुना जाता है। अब यह कारबार संसार के सब कारबारों से बढ़ गया है और लाखों मनुष्य और स्त्रियां इस में लगे हुए हैं। सूती कपड़े के बुनने के सम्बन्ध में यह परमावश्यक है कि बुनने और कातने की मिलें पास पास हों। यही कारण है कि मैनचेस्टर और ग्लासगो और बम्बई और अहमदाबाद इतने अधिक पास पास हैं।

मनुष्य स्वभाव से ही सुन्दरता का प्रेमी है। वह संसार की वस्तुओं को केवल इसी दृष्टि से नहीं देखता कि वह उस के लिए लाभदायक होंगी परन्तु वह उनमें सौन्दर्य भी ढूंढ़ता है। सम्भवतः इसी बुनियाद पर कपड़ों पर फूल और बेल बूटे छापना तथा उन्हें रंगना प्रारम्भ हुआ होगा। यह बात तो निर्विवाद ही है कि संसार की सभी असभ्य जातियां भड़कीले रंगों को अधिक पसंद करती हैं। इस लिए यह मान लेना कि कपड़े बुनने की कला के आविष्कार करने के साथ ही साथ या थोड़े ही समय बाद छापने और रँगने की कला का

आविष्कार हुआ होगा कुछ असंभव नहीं है। उस समय के रंग भी नील, टेसू या हारसिंगार की भांति वनस्पतियों से ही प्राप्त किये गये होंगे। सारे संसार में थोड़े ही वर्ष पहले इन्हीं वानस्पतिक रंगों की बड़ी धूम थी। परन्तु जब से रासायनिक रंग बनाने का आविष्कार हुआ इस कला के प्रादुर्भाव में बड़ी चमत्कारपूर्ण उन्नति हो गयी। अब तो रंग ही नहीं परन्तु रंगीन वस्त्र बनाने की एक बड़ी व्यापक और उपयोगी कला का आविर्भाव हो गया है। वैज्ञानिक उन्नति द्वारा मनुष्य ने अपनी आवश्यक वस्तुओं के लिए ही नहीं परन्तु भोगोपभोग की वस्तुओं के लिए भी प्रकृति को अपने बस में कर अपने हितसाधन के अनेकानेक साधन ढूंढ निकाले हैं।

चौथा अध्याय

प्रारम्भिक कलाकौशल

हम ने अभी हाल में इस बात का वर्णन किया है कि मनुष्य ने भोजन बनाने की कला का आविष्कार बहुत ही प्राचीन समय में कर लिया होगा। और उस समय वस्तुओं को भून कर ही पका लेना पाकशास्त्र की प्रारम्भिक क्रिया रही होगी। इस के बाद धीरे धीरे उसी पूर्व ऐतिहासिक काल को आदिम स्त्रियों को यह विदित हो गया होगा कि मांस, कंद और मूल इत्यादि उबाल कर, तल कर अथवा दम कर के भी पकाये जा सकते थे। परन्तु इस प्रकार भोजन पकाने के लिए बरतनों की आवश्यकता हुई होगी। कहना नहीं होगा कि पहले बरतन पत्थर के बनाये गये होंगे। अमेरिका के आदिम निवासियों के एक प्रकार के पत्थर के बरतन अजायबघरों में अब भी देखने को मिल जाते हैं। यह पत्थर बहुत मुलायम होता है और आग पर नहीं चटकता।

परन्तु ऐसे देशों में जहां इस प्रकार के मुलायम पत्थर प्राप्त नहीं थे मनुष्य को किसी ऐसी वस्तु को ढूंढ़ निकालने की आवश्यकता हुई होगी जिस के बरतन बना कर उन में भोजन बनाया जा सके। कुछ दिनों की चिन्ता और कठिनाई के बाद मनुष्य की बुद्धि और अन्वेषण को सफलता प्राप्त हुई और उस ने इस बात का पता लगा लिया कि इस प्रकार की

मट्टी मौजूद है जो आग पर न चटकेगी। फलतः इसी मट्टी के बरतन और कटोरे बनाये जाने लगे।

आदिम अवस्था में तो मनुष्य भी पशुओं की तरह नदी या ताल के किनारे पेट के बल लेट कर पानी पिया करता होगा। इस के बाद चुल्लुओं में भर भरकर पानी पीने लगा। जब मट्टी के बरतन बनने लगे होंगे तब मनुष्य ने जो बरतन सब से पहले बनाया होगा वह अवश्य ही पानी पीने का प्याला या गिलास रहा होगा। खोज से जहां तक पता चलता है सब से पहले चीनियों ने बरतन बनाने का सुयश प्राप्त किया। उन्हों ने चीनी मट्टी का आविष्कार किया। आज दिन भी संसार में सब से बढ़िया चीनी मट्टी के बरतन चीन देश में बनाये जाते हैं। डच, अंग्रेज़, फ्रांसीसी और जापानी भी अब चीनी के बड़े उत्तम बरतन बनाते हैं।

आदिम मनुष्य ने जिस दूसरी वस्तु का आविष्कार किया और जो सारी मनुष्य जाति के लिए बहुत लाभदायक प्रतीत हुई वह आविष्कार खड़ाऊं या जूता का था। मनुष्य का पैर मुलायम होता है और उस में कांटा चुभने से अथवा पत्थर की ठोकर लग जाने से बड़ा दुख होता है। इस लिए अपने पैरों की सुरक्षा किये बिना मनुष्य के लिए बहुत दूर चलना तथा शिकार करना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य था। इसलिए सब से पहला जूता चप्पल की तरह का रहा होगा। यह कठोर पृथिवी से पैरों के तलुओं की रक्षा करने के लिए बनाया गया था। चीन और मलाया का

जूता भी इसी प्रकार का था। परन्तु ठंडे प्रदेशों में केवल पैर के तलुवे को ही रक्षा से काम नहीं चल सकता था। यही कारण है कि उत्तरी अमेरिका में हिरन की खाल के बने हुए मुकासिम (हिरन की खाल का थैले के आकार का अमेरिका के आदिम निवासियों का जूता) तथा लापलैंड और उत्तरी ध्रुवप्रदेशों के लोगों के तरह तरह के चमड़े के जूते बनने लगे। ये सारे पैर को ढक लेते थे और उन्हें गरम बनाये रखते थे।

परन्तु सब से उपयोगी और सब से आवश्यक जो आविष्कार मनुष्य ने किया वह घर बनाने का था। अपने आराम और सुविधा के लिए मनुष्य की बुद्धिमत्ता ने घर बना कर सभ्यता की दौड़ में बहुत ऊंचा स्थान प्राप्त कर लिया। क्योंकि भोजन बनाना है तो बड़ा उपयोगी और उत्तम गुण परन्तु वर्षा अथवा आँधी के समय इस की सुविधा कहां! इसी प्रकार बरतन बनाना भी है तो बड़ा अद्भुत कौशल, परन्तु धूप में बैठ कर अथवा मेह में भीग कर इस में आराम कहां! इसी लिए आदिम मनुष्य ने ऊपर की धूप और मेह से बचने तथा चारों तरफ़ से लगनेवाली हवा से सुरक्षित रहने के लिए घर का निर्माण किया। 'हिम-युग' और 'पाषाण-युग' के मनुष्य भालू और रीछों की तरह या तो खोहों और खंडरों में छिपे पड़े रहते थे या मरकट और बन्दरों की तरह वृक्षों पर टंगे रहते थे। आज दिन भी संसार के कई प्रदेशों में ऐसी असभ्य जातियाँ मौजूद हैं जो कन्दराओं अथवा वृक्षों पर रहती

हैं। कन्दराओं में रहनेवाले (रीछ?) मनुष्यों ने बहुत शीघ्र ही इस बात की आवश्यकता प्रतीत की होगी कि कन्दराओंके मुख पर कोई द्वार हो और इसी प्रकार वृक्षों पर रहनेवाले (वानर?) मनुष्यों ने इस बात की आवश्यकता प्रतीत की होगी कि उन के रहने के स्थान के ऊपर कोई छत हो।

'पाषाण-युग' के मनुष्यों ने पत्थर की उपयोगिता भली भांति समझ ली थी। इस लिए सब से पहले वर्षा और शीत से सुरक्षित रहने के लिए पाषाण का ही उपयोग किया गया। अर्थात् कन्दराओं के द्वार और वृक्षों पर की छत के लिए शिला का उपयोग होने लगा। इन सरल और साधारण प्रारम्भिक साधनों से अब हमारे लिए यह अनुमान कर लेना अधिक कठिन नहीं है कि मनुष्य ने पहले पहल मकान भी पत्थर के बनाये। शिला का द्वार तो वह बना ही चुका था और शिला की छत भी उस ने बना ली थी। अब उस ने शिला की दीवारें भी बना डालीं। इस पाषाण युग में ही मनुष्य ने शिलाओं को इधर उधर चुन कर घर की दीवारें खड़ी कीं और इन शिलाओं के ऊपर से पत्थर ढक कर छत बना ली। अब रह गया दरवाज़े को बन्द करने का काम सो वह भी शिला से ही लिया जाने लगा। ऊपर के मेह और धूप से तथा चारों तरफ़ से लगनेवाली हवा से इस प्रकार जिस शिला ने आदिम मनुष्य की सुरक्षा की वह शिला क्यों न उस के लिए परम पूजनीय और आदर की वस्तु हो!

गरम प्रदेशों में मकान बनाने के लिए आदिम मनुष्यों के

लिए और भी साधन उपलब्ध थे। भारतवर्ष में ताड़ के पत्तों की पर्णकुटी, मेक्सिको में मट्टी के झोपड़े तथा उत्तरी अमेरिका में जहां लकड़ी बहुतायत से मिलती है लकड़ी के सोटों के घर अब भी देखने को मिलते हैं। वस्तुतः मनुष्य को इस बात का अनुभव हो गया कि खुले में रहने की अपेक्षा दीवारों और छत से सुरक्षित रहने में न केवल उस का जीवन निर्वाह ही सुखद और सुगम था वरन् सभ्यता प्राप्त करने के अनुसन्धान में भी उस को इन घरों में रह कर बड़ी सुविधा थी।

जब मनुष्य ने मट्टी के बरतन बनाने का आविष्कार किया तब उसे यह भी अवश्य मालूम हुआ होगा कि मट्टी से और भी कई काम लिये जा सकते हैं। बस जहां घर बनाने के लिए भारी भारी शिलाओं को उठाने और उन्हें ला कर रखने में असुविधा प्रतीत हुई कि शिलाओं की जगह मट्टी की ईंट थाप कर घर बनाने में सुविधा ढूंढ़ निकाली गयी। पत्थरों को काट छांट कर घरों की दीवार बनाने के लिए शिलाएं बनाने से मिट्टी थाप कर ईंटें बना लेना बड़ा सुगम प्रतीत हुआ। मिश्र देशवाले ईंट बनानेवाली सब से पहली जाति हैं और आज दिन भी ईंटों के बने हुए मिश्र के सूचि संसार के लिए बड़े कौतूहल और आश्चर्य्य को वस्तु हैं।

घर बनाने के साधनों में सभ्यता के प्रादुर्भाव के साथ ही साथ अनेकानेक उन्नतियां हुईं। लकड़ी की सोट और कड़ियां काट कर तथा तख़्तों से पाट कर छतें बनने लगीं। इस के बाद लकड़ी ही के दरवाज़े और खिड़कियां तथा कुछ
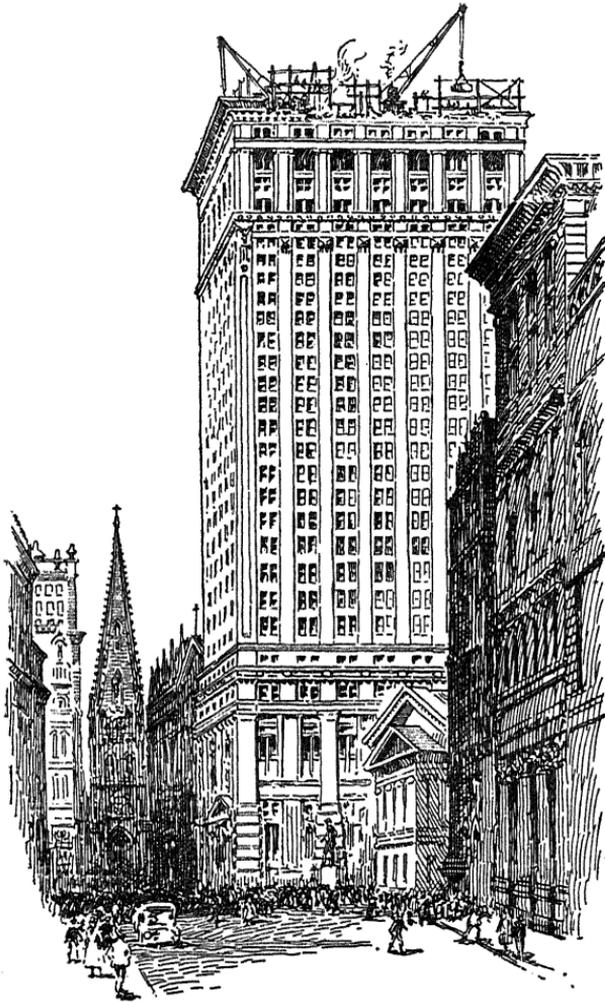
अमेरिका के गगनचुंबी भवन

देशों में लकड़ी ही की दीवारें भी बनायी गयीं। यहां तक कि 'लौह-युग' में जब यह मालूम हुआ कि लकड़ी की सोटों और कड़ियों से लोहे के गरडर और कड़ियां अधिक मज़बूत हैं तो इन्हीं का उपयोग छत बनाने में होने लगा। परन्तु कितने हज़ार वर्षों के बाद मनुष्य इस अवस्था को प्राप्त हुआ यह केवल अनुमान द्वारा ही विदित होता है। आज दिन न केवल छत पाटने के लिए लोहे के गरडर काम में लाये जाते हैं परन्तु ८, १० अथवा ३०, ४० मंज़िल ऊंचे मकान बनाने के लिए लोहे के गरडर दीवारों में लगाये जाते हैं।

आदिम मनुष्यों के मकानों में प्रकाश और हवा के आने जाने के लिए न खिड़कियां होती थीं और न धुआँ निकलने की चिमनियां। यह तो सभ्यता के विकास की महिमा है। आदिम मनुष्य छत में एक सूराख़ कर धुआँ निकालने के लिए धुअँहरा बना लेते थे। १६ वीं शताब्दी तक इंग्लैण्ड में भी मकानों में ऐसी चिमनियों का आविष्कार नहीं हो पाया था जिन में होकर धुआँ तो निकल जाय परन्तु वर्षा का जल न पहुंच सके। खिड़कियां तो इस के बहुत बरसों बाद बनीं। १७ वीं शताब्दी में खिड़कियों में शीशा लगाने का रिवाज शुरू हुआ परन्तु यह आविष्कार हो जाने के बाद बहुत बरसों तक शीशा इतना मंहगा था कि शीशे की खिड़कियाँ बनायी तो अवश्य जाती थीं परन्तु वह इतनी छोटी होती थीं कि जिस काम के लिए वह बनायी गयी थीं वह उनसे न निकल सका।

पांचवां अध्याय

खनिजों का उपयोग

हम आज कल 'लौह-युग' में रहते हैं। परन्तु इस युग को प्रारम्भ हुए सैकड़ों वर्ष बीत चुके। मुद्दतों तक लोहे का उपयोग बहुत परिमित रहा अर्थात् मनुष्य ने चाकू, छुरे, कुल्हाड़ी, हथौड़े इत्यादि छोटे छोटे हथियारों और औज़ारों के बनाने में ही इसका उपयोग किया। किन्तु अब बहुत बड़ा परिवर्तन हो गया है। यहां तक कि अब हमारी वर्तमान सभ्यता लोहे के विस्तार पर ही निर्भर है। आज कल प्रति दिन करोड़ों मन लोहा खानों से निकाला जाता है, भट्टियों में पिघलाया जाता है और इतने अगणित कामों मे व्यवहार होता है जिन का आदिम मनुष्य ने तो कभी स्वप्न में भी विचार न किया होगा। कुछ ही वर्ष पहले जिन चीज़ों के बनाने में हम प्रायः लकड़ी या पत्थर का इस्तेमाल करते थे वह सब आज लोहे से बनायी जाती हैं। लोहे के पुल बनाये जाते हैं। लोहे के जहाज़ बनते हैं और लोहे के मकान भी बनते हैं। हमारे कारखाने लोहे के ऐसे यंत्रों से भरे पड़े हैं जिन से लोहे की हज़ारों और लाखों उपयोगी वस्तुएं बनायी जाती हैं। लाखों मील रेल की सड़कें लोहे की बनी हुई हैं। और इन्हीं लोहे की सड़कों पर लोहे के ऐन्जिन लोहे की पहियों पर चलनेवाली लोहे की बनी हुई गाड़ियों को देश देशान्तरों में खींचते फिरते हैं। आजदिन यह सब उन्नति लोहे और लोहे की व्यापक उपयोगिता के कारण है।

परन्तु लोहे की यह व्यापक उपयोगिता इस लिए सम्भव है

कि मनुष्य ने एक दूसरे खनिज अर्थात् पत्थर के कोयले को खोज निकाला है। तेज़ आग के बिना लोहे को तपा और गला कर उस के द्वारा अनेक वस्तुएं बनाना असम्भव है। फिर यह आग बहुत बड़ी भट्टी में जलायी जानी चाहिए और बहुत प्रचंड भी होनी चाहिए। सैकड़ों वर्ष तक मनुष्य ने लकड़ी जलाकर ही ईंधन का काम लिया। संसार में ऐसे भी प्रदेश हैं जहां लकड़ी बहुत कम मिलती है और
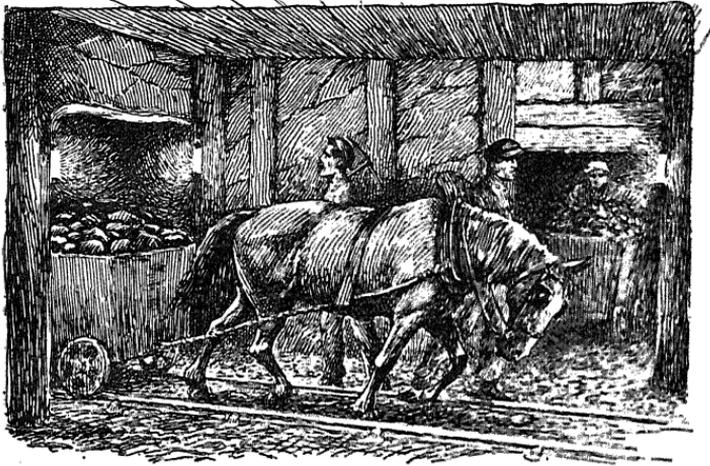
पत्थर के कोयले की खान

ऐसे भी स्थान हैं जहां लकड़ी और लोहा दोनों ही बहुतायत से पाये जाते हैं। लकड़ी तो और भी सैकड़ों तरह के कामों में आती है परन्तु पत्थर का कोयला ईंधन के सिवाय और किसी काम का नहीं। इस के अतिरिक्त इसे खोद कर और खान में से निकाल कर तुरन्त ईंधन के काम में लाया जा सकता है और यह लकड़ी की अपेक्षा सस्ता भी पड़ता है तथा इस की अग्नि भी बहुत प्रचण्ड

होतो है। अस्तु पत्थर के कोयले की खोज से मनुष्य को एक परम उपयोगो और सस्ता इंधन मिल गया जिसके कारण लोहे से आज दिन इतना अधिक काम लिया जा सका जो केवल लकड़ी के इंधन की बदौलत असम्भव था।

इस उल्लेख से यह तो प्रगट हो गया कि लोहा और कोयला दोनों ही परम आवश्यक हैं और दोनों ही एक दूसरे के उपयोग में परम सहायक हुए हैं। इस लिए जहां कोयला और लोहा दोनों ही अधिक हों तथा दोनों की खाने पास पास हों उन्हीं देशों में लोहे के अस्त्र शस्त्र और यंत्र बनाने का व्यवसाय परम उन्नति प्राप्त कर सकता है। इंग्लैण्ड, अमेरिका की न्यू इंग्लैण्ड स्टेट्स, उत्तरी फ्रांस की आलसेस लारेन और बेल्जियम यही ऐसे देश हैं जहां लोहे की चीज़ें बनाने का व्यवसाय परम उन्नत अवस्था को प्राप्त है। इन देशों को एक बड़ा लाभ यह भी है कि यहां की कोयले की खानें समुद्र तट पर हैं। इस लिए ये अपनी अवाश्यकता से अधिक बचे हुए कोयले को अन्य देशों में भी भेजते रहते हैं। इटली और स्पेन में खनिज धातुएं तो बहुत तरह की पायी जाती हैं किन्तु वहां कोयले की खानें नहीं हैं इस लिए उन्हें इंग्लिस्तान से कोयला मंगाना पडता है।

जापान जो आज से ५० वर्ष पूर्व एक बहुत कम प्रसिद्ध और साधारण सा द्वीप समूह था इन्हीं कोयले की खानों की बदौलत आज संसार का एक बड़ा शक्ति और समृद्धिशालो राज्य है। अपने देश में लोहे और स्पात की वस्तुओं के बनाने के लिए जापान में बहुत अधिक कोयला मौजूद है इस लिए वह अन्य देशों को भी कोयला बेच सकता है।

सोना यद्यपि कुछ अधिक उपयोगी वस्तु नहीं है किन्तु मानवी सभ्यता की उन्नति में इस से भी बड़ी सहायता मिली है। पश्चिमी आफ्रिका, आस्ट्रेलिया, कैलीफ़ोर्निया, अलास्का और मैसूर की कोलार की खानों से सोना निकाला जाता है। सोने के रूप रंग ही के कारण वह इतना बहुमूल्य है। प्रायः हर युग में उस के आभूषण और सिक्के बनाने के लिए उस का उपयोग किया जाता रहा है। यह बहुमूल्य धातुओं में से एक धातु है। मनुष्य के लिए यह अधिक उपयोगी नहीं है परन्तु फिर भी सभी देशों की उन्नति करने में इस ने बड़ा काम किया है। कैलीफ़ोर्निया का वृत्तान्त जानने से यह बात सहज ही समझ में आ जायगी। सन् १८४६ ई० में यहां सब से पहले सोने की खानों का पता चला और इस के साथ ही यूरोप के हर प्रदेश से इन सोने की खानों को खोद कर सोना निकालने के लिए लोगों का तांता बंध गया। आज दिन केलीफ़ोर्निया केवल सोने की खानों के लिए ही प्रसिद्ध नहीं है। यहां शराब, फल और तरकारी का व्यापार ख़ूब होता है क्योंकि सोने की खानों से जो धन प्राप्त हुआ उस के द्वारा इस प्रदेश की ख़ूब उन्नति हुई।

एक और खनिज पदार्थ जो मनुष्य के लिए परम उपयोगी और बहुत मूल्यवान साबित हुआ तथा जिस ने मनुष्य को प्रकृति पर विजय पाने में बहुत बड़ी सहायता दी वह मट्टी का तेल है। पहले पहल मनुष्य ने वनस्पतियों से तेल निकाला होगा। ऐसी वनस्पतियों को तेलहन कहते हैं। इन से तेल निकालना आज कल के आविष्कृत यंत्रों द्वारा भी बहुत कठिन और परिश्रम-पूर्ण साधन है। इस लिए

पृथिवी में से प्राकृतिक तेल की खोज ने जिसे केवल इकट्ठा करके एक जगह जमा ही करना पड़ता है मनुष्य की उन्नति को और भी अधिक सुलभ और सुदृढ़ बना दिया। पेन्सेलवेनिया, ब्रह्मा और दक्षिणी रूस में मट्टी का तेल बहुत अधिक मिलता है। सस्ता होने के कारण केवल जलाने के लिए ही अब इस ने वानस्पतिक तेलों
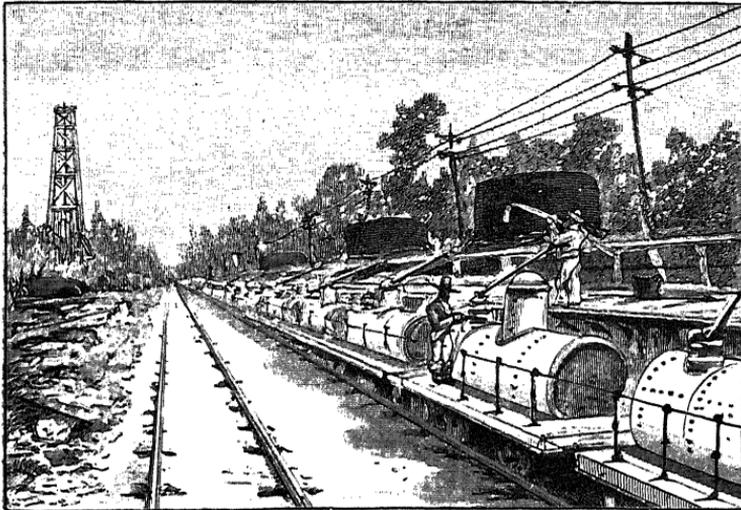
पेनसिलवेनिया के मट्टी के तेल के कूप

का स्थान प्राप्त ही नहीं कर लिया है किन्तु आज कल मोटरकार और हर प्रकार की मशीनों के चलाने में इसी तेल का व्यवहार होता है।

दक्षिणी अमेरिका में चिली नामक एक जलशून्य प्रदेश है। वहां न मेह बरसता है न कोई नदी अथवा नाला है और न ही कोई जलश्रोत या जलप्रपात है। अर्थात् वहां पानीका नामो निशान भी नहीं है। पानी के बिना किसी प्रकार की वनस्पतियों अथवा

पौधों और पेड़ों का भी अभाव है। परन्तु इस मरुभूमि में क़लमी शोरे की तहें मौजूद हैं और इसी कारण यह प्रदेश संसार के इतिहास में इस बात का उदाहरण स्वरूप है कि केवल उत्तम खनिज के कारण ऐसा अनुर्वर प्रदेश भी इतना समृद्धिशाली हो सकता है।

क़लमी शोरा विस्फ़ोटकों के बनाने में काम आता है। इस की खाद भी बड़ी उत्तम और बहुमूल्य होती है। इंगलैण्ड के किसान अक्सर इस खाद को बहुत ख़रीदते हैं इस लिए पानी जैसी आवश्यक वस्तु के अभाव में भी इस मरुभूमि में अच्छे गांवों और शहरों की कमी नहीं है। यहां के लोग क़लमी शोरा खोद खोद कर बाहर भेजते हैं। इन लोगों के खाने की वस्तुएं तथा पहिनने के कपड़े सुदूरदेशों से रेल द्वारा पहुंचते रहते हैं। पहले पानी भी रेल द्वारा पहुंचाया जाता था किन्तु अब बड़े बड़े नगरों में पानी के नल लगा दिये गये हैं जिन में १०० मील से भी अधिक दूर से पानी पहुंचाया जाता है। अब चिली बड़ा धनाढ्य प्रदेश हो गया है। इस का समुद्र तट भी ख़ूब विस्तृत है इस लिए इस का अधिकांश भाग ख़ूब उपजाऊ है। परन्तु इस प्रदेश की सारी आमदनी का ⅚ भाग इस जल शून्य मरुभूमि से प्राप्त क़लमी शोरे के व्यापार से मिलता है। जब हम यह देखते हैं कि मनुष्य ऐसी मरुभूमि में भी जाकर बस जाते हैं जहां न भोजन है और न पानी तो हम को पता लगता है कि मनुष्य ने प्रकृति पर विजय प्राप्त करने में कितना अद्भुत और महत्वपूर्ण कौशल दिखलाया है।

इसी प्रकार दक्षिणी अमेरिका की पीरू रियासत में सेरोडी पास्को एक दूसरा विलक्षण नगर है। यह नगर विषवत

रेखा के समीप संसार के बहुत गरम प्रदेश में है। इस पर भी यह ऐसे पहाड़ों के बीच बसा हुआ है जो समुद्र तल से १५००० फ़ीट ऊंचे हैं। यहां की जलवायु इतनी दुःसह है कि यहां किसी प्रकार का जीवन सम्भव नहीं। यहां न मुर्ग़ियां अण्डे देती हैं और न मनुष्यों के बच्चे पैदा होते हैं और न जानवरों के। यहां तक कि कुत्ते भी यहां पहुंच कर मर जाते हैं। परन्तु इस पर भी इस शहर में १४००० मनुष्य रहते हैं जो चांदी की खानें खोदते हैं। उन के खाने पीने और पहनने की सारी सामग्री नीचे के मैदानों से जाती है जिसे यह चांदी से मोल लेकर बर्तते हैं। इस प्रकार का विचित्र जीवन केवल इन्हीं नगरों में नहीं है। लण्डन तथा अन्य बड़े शहरों में भी लोगों का जीवन बड़ा अद्भुत और कृत्रिम है। लण्डन में लगभग सत्तर लाख मनुष्य ऐसे हैं जो किसी प्रकार के भोजन की सामग्री पैदा नहीं करते। अगर इन का सम्बन्ध बाहरी दुनिया से टूट जाय तो १५ ही दिन के भीतर यह सब भूखों मरने लगें। यहां पानी बहुत दूर से लाया जाता है। अगर कहीं पानी पहुंचाने के ये साधन न रहें या बन्द हो जांय तो २ ही ३ दिन में हज़ारों मनुष्य प्यास से तड़प तड़प कर मर जांय। अस्तु लण्डन जैसे बड़े शहर शहरों का जीवन भी प्रायः उतना ही कृत्रिम है जितना सेरोडीपास्को का। वास्तव में मनुष्य ने प्रकृति पर इस अंश तक विजय प्राप्त कर ली है कि वह अब संसार के किसी भी प्रदेश में जाय उसे खाने पीने तथा पहनने की किसी भी वस्तु की कोई तकलीफ़ नहीं हो सकती।

छठा अध्याय

मशीनों द्वारा स्थूल पदार्थ पर विजय

मानवी सभ्यता की आरम्भिक अवस्था में न मालूम किस समय मनुष्य ने यह अनुभव प्राप्त किया कि बहुत से काम करने में अड़चनों, असुविधाओं तथा परिश्रम की मात्रा में कमी करने के लिए उस को किसी न किसी यंत्र की सहायता लेने की आवश्यकता है। अगर उसे जंगल में मकान बनाने को आवश्यकता हुई तो झाड़ियों और गिरे हुए वृक्षों के तने और डालियों को काट कर हटाने तथा पृथिवी को चौरस करने और बड़े बड़े पत्थर इत्यादि को हटाने की ज़रूरत हुई होगी। इन सब कामों को करने के लिए उसे जिस प्रकार के यंत्र की आवश्यकता हुई होगी उसका आविष्कार करने में सम्भव है कि उसे यह अनुभव हो गया हो कि पैर टांग और बांह जैसे यंत्र उस के शरीर में मौजूद हैं। इसी प्रकार जब ठोकर मार कर उस ने पत्थर के रोड़ों को राह में से हटा दिया होगा तो सम्भवतयः उस की समझ में यह बात आ गयी होगी कि इसी प्रकार अन्य रुकावटों को हटाने के लिए वह ऐसे ही किसी यंत्र की सहायता ले सकता है। इसी तरह यह बात और भी अधिक सम्भव है कि जब उसने वृक्ष के दो तनों को एक दूसरे पर से गुज़रते हुए देखा होगा तथा किसी पत्थर की चट्टान पर लकड़ी की कड़ी

पड़ी हुई देखी होगी तो अवश्य ही डांड का उपयोग उस की समझ में आ गया होगा। अर्थात जब इस कड़ी का एक सिरा दबा कर उसने नीचे किया होगा तो दूसरा सिरा अवश्य ही नीचे से ऊपर को उठ गया होगा। मनुष्य ने डांड के इन उपयोगी सिद्धान्तों का आविष्कार किसी भी भांति किया हो परन्तु यह बात निर्विवाद है कि इस पहले यंत्र के बना लेने से उसे बड़ी सहायता मिली होगी और उस के कार्य में बड़ी सुविधा हो गयी होगी।

आज दिन संसार में इस डांड़ को हज़ारों और लाखों तरह से काम में लाया जाता है। लाखों तरह की मशीनों में किसी न किसी भांति इस का काम पड़ता है। सब से सीधा डांड़ कुदाली है। इस का उपयोग भारी पत्थरों को उठाने में किया जाता है। कुदाली का एक सिरा पत्थर के नीचे लगा कर दूसरे सिरे को नीचे की ओर दबाने से पत्थर ऊपर को उठने लगता है। जितना इस सिरे को नीचे की तरफ़ दबाते जांय पत्थर उतना ही ऊपर उठता चला जाता है।

इस साधारण कुदाली के उपयोग में तीन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है। (१) कोई ऐसी चीज़ होनी चाहिए जिसे हमें हटाना हो उदाहरण के लिए भारी पत्थर या चट्टान जिस का भार पृथिवी की ओर हो। (२) एक डांड़ जिसके एक सिरे को हमें नीचे की तरफ़ दबाना हो। तीसरे वह विशेष स्थान जहां यह डांड़ पृथिवी से छूता हो। इस स्थान पर डांड तो अचल रहती है परन्तु उस के दोनों सिरे ऊपर नीचे घूमते रहते हैं।

इसी डांड के उपयोग का दूसरा उदाहरण तराज़ू है। अगर तराज़ू के एक पल्ले में कोई भारी चीज़ रख दी जाय तो यह पलड़ा नीचे को झुक जायगा और दूसरा पलड़ा जो ख़ाली है ऊपर को उठेगा। अगर इस ख़ाली पलड़े में कोई ऐसी चीज़ रख दी जाय जो पहले से अधिक भारी हो तो यह पलड़ा नीचे को झुक जायगा और पहला पलड़ा ऊपर उठ आवेगा। इस उदाहरण द्वारा भी डांड़ के सम्बन्ध में तीन बातें विचारनीय है। (१) वह स्थित और स्थिर स्थान जो डांड़ को सहारता है उसे आधार कहते हैं। (२) वह चीज़ जिसे ऊपर उठाना होता है। (३) वह शक्ति जो उस भार को उठाने के लिए उपयोग में लायी जाती है।

मनुष्य के लिए इन डांड़ों की उपयोगिता बहुत अधिक है। विज्ञान द्वारा हम ऐसी हर एक मशीन की उपयोगिता ठीक ठीक मालूम कर लेते हैं और इसे प्रत्येक मशीन की यांत्रिक उपयोगिता कहते हैं। आज कल तराज़ू कुदाली, फावड़ा, गंड़ासी, छेनी, कैंची, ढेंकी इत्यादि अनेकों प्रकारके डांड़ काम में लाये जाते हैं। प्रकृति पर विजय पाने के लिए यह सब उपयोगी हैं। एक दूसरा यंत्र जो चीज़ों को फाड़ने या चीरने में काम आता है उसे रुखानी कहते हैं। इस यंत्र का सहज दृष्टान्त कुल्हाड़ी है।

ढालू पाड़ बांध कर भारी चीज़ों को नीचे से ऊपर ले जाने में बड़ी सुविधा होती है। सीढ़ियों पर बोझा ले कर उतरने की अपेक्षा ढालू पाड़ पर बोझा ले जाना सहल है। इसी प्रकार, ढालू पाड़

पर हो कर किसो भारी चोज़ को रस्सियों को सहायता से खींच लेना आसान है। कहा जाता है कि तंजौर के मंदिर के ऊपर के पत्थर का गुम्बज़ इसो प्रकार ऊपर चढ़ाया गया था।
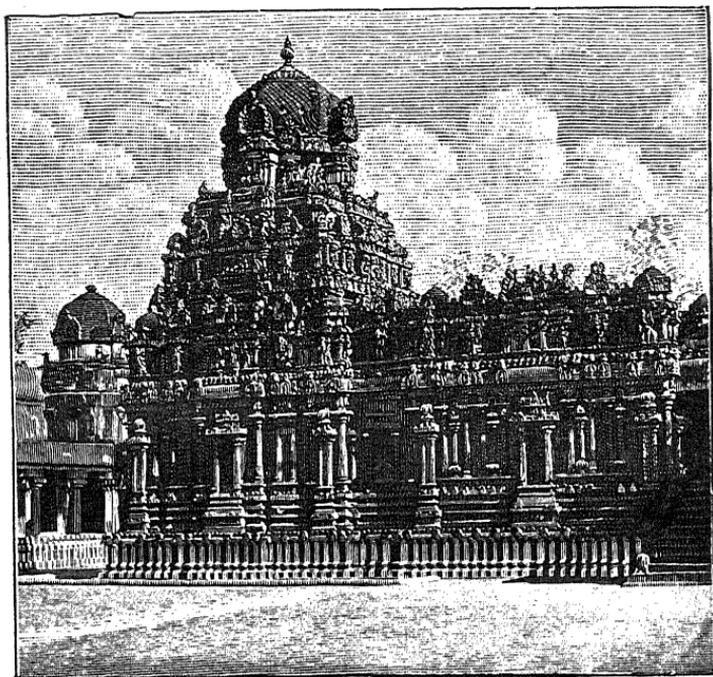
तंजौर के देव मंदिर

चरख़ी भी इसी प्रकार का एक यंत्र है अगर हम चरख़ी पर रस्सी डाल कर किसी भारो चोज़ को बांधकर खोंचे तो बिना चरख़ी के खोंचने में जितना परिश्रम होता है अब उससे आधे से भो कम परिश्रम पड़ेगा। प्रायः हर प्रकार के यंत्रों में इस चरख़ी का उपयोग होता है।

इसी प्रकार पहिया भी बड़ी उपयोगी मशीन है। हम यह अनुमान कर सकते है कि पूर्व ऐतिहासिक काल में आदिम मनुष्य ने लकड़ी के लट्ठे को पहाड़ी पर से ढुलकते हुए देख कर इस का आविष्कार किया होगा। सब से पहली चरखी लम्बे लट्ठे को रही होगी। धीरे धीरे इस में उन्नति होते होते दो पहियों को एक धुरी द्वारा जोड़ दिया गया होगा। यह खोज कुछ अधिक कठिन तो नहीं मालूम होती परन्तु मानवी समाज की उन्नति में यह बड़े महत्व की है। क्योंकि चरखी की तरह की कोई वस्तु प्रकृति में नहीं है और इस आविष्कार का श्रेय मनुष्य की ही बुद्धि और अन्वेषण को प्राप्त है। इसी आविष्कार द्वारा उसने भारी चीज़ों के लाने ले जाने के साधन ढूंढ़ निकाले।

सब से पहले पहियेदार मशीन जिस में स्वयम् जुत कर तथा अन्य पालतू जानवरों को जोत कर मनुष्य ने चलाना प्रारम्भ किया वह गाड़ी या छकड़ा है। मनुष्य ने बहुत प्राचीन युग में ही पानी पर नाव चलाना सीख लिया था। इस लिए अब पानी और पहिया दोनों के द्वारा एक नया अविष्कार किया गया। थोड़े ही दिनों के अनुभव से उसे यह बात विदित हो गयी होगी कि ढालू पहाड़ी पर से गिरने में पानी में एक प्रकार की शक्ति उत्पन्न हो जाती हैं और वह पहिये को घुमा सकती है। थोड़े दिनों के अन्वेषण द्वारा उस ने यह भी खोज निकाला होगा कि लकड़ी के एक बड़े पहिये को किस प्रकार लगा दिया जाय कि ऊपर से पानी की धार गिरने पर वह घूमता रहे। इसी पहिये के साथ एक बड़ा सा गोल पत्थर इस प्रकार लगा दिया जाय कि पहिया घूमने से वह दूसरे पत्थर पर घूमता रहे।

इस तरकीब से इन दोनों पत्थरों के बीच में नाज डालकर आटा पीसने की चक्की का आविष्कार हुआ।

जहां जलप्रपात नहीं था वहां नालों पर बंद बाँध कर मनुष्य ने पानी को इस प्रकार गिराने की तरकीब निकाली कि उस से चक्कीका पहिया घूम सके। परन्तु जिन देशों में इस प्रकार पानी प्राप्त नहीं होता था वहां चक्की चलाने के लिए दूसरा साधन ढूंढ़ निकाला।
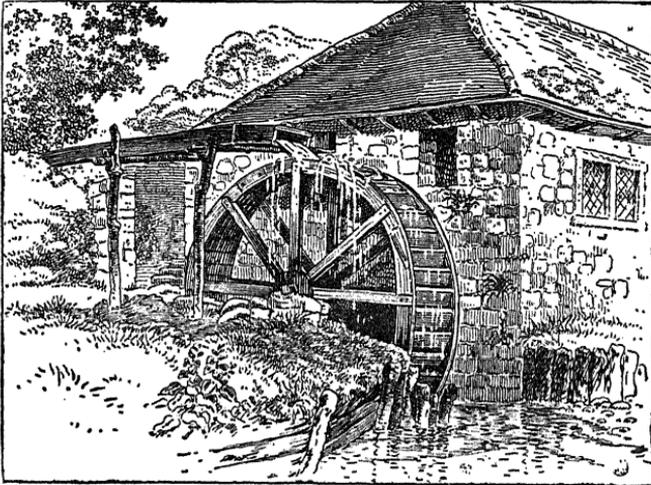
पन चक्की

पानी की जगह हवा से चक्की चलाने का काम लिया जाने लगा। पहिये में एक बड़ा पतवार बांध कर उस में दो पाल लगा दिये गये। इन में हवा बहने के कारण पहिया उसी प्रकार घूमने लगा जैसे पानी गिरने से घूमता था। बस इस तरह से पवन चक्की का आविष्कार हुआ। सिसली तथा हालैण्ड में आज दिन तक यह पवन चक्कियां देखने को मिलती हैं।

मनुष्य की उन्नति और प्रकृति पर विजय प्राप्त करने में यह साधारण परन्तु परम उपयोगी मशीनें बहुत बहुमूल्य हैं। इंगलैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, अमेरिका तथा अन्य उन्नत देशों में आज दिन प्रायः प्रत्येक वस्तु मशीन द्वारा बनायी जाती है। प्रत्येक वर्ष यह

पवन चक्की

देश अपनी मशीनों से बना कर सैकड़ों प्रकार की वस्तुएं संसार के अन्य देशों में भेजा करते हैं। उदाहरणार्थ हमारे देश में थोड़े ही वर्ष पूर्व प्रायः हर प्रकार का कपड़ा बनाया जाता था और हर भारतवासी उसी को पहन कर अपने को

कृतकृत्य समझता था। परन्तु आज कल हमारे पहनने के कपड़ों में से प्राय: बहुत से मैनचेस्टर से बन कर आते हैं और यद्यपि इन्हे वहां से हिन्दुस्तान तक लाने में काफ़ो किराया भाड़ा लग जाता है परन्तु फिर भो मशीनों द्वारा बने होने के कारण हाथ के बने हुए देशी कपड़े से सस्ते मिलते हैं। इंग्लैण्ड में उन्नोसवीं शताब्दो के आरम्भ में हो औद्योगिक क्रान्ति हुई जिसके कारण उद्योग धन्धों को रोति में बड़े विप्लवकारी परिवर्तन हुए। हाथ द्वारा चलाये जानेवाले सभी उद्योग धन्धों में अब मशीन से कार्य्य लिया जाने लगा है।

इस बात के समझने के लिए कि मशोन द्वारा मनुष्य को उन्नति में कितना बड़ा परिवर्तन हुआ है हम सोने की मशोन का उल्लेख किया चाहते हैं। अभो ५० वर्ष भी नहीं हुए कि भारतवर्ष में सहस्त्रों वर्ष पहले को भांति सारी सिलाई हाथ से को जाती थी। परन्तु आज शहर और क़स्बों में ही नहों बलिक गांवों में भो दरज़ो की दुकान पर सिंगर कम्पनो को सीने की मशीन चलती हुई दिखायी देती है।

मशीन का सब से बड़ा लाभ यह है कि उस के चलाने में, उस के रखने में तथा उस को मरम्मत करने में बड़ी आसानी होती है। बैल या घोड़ा रखने में उसे खिलाने का ख़र्च पड़ता है। जानवर खाता भो अधिक है इस लिए उसके खिलाने के लिए अलग खेतो करनो पड़ती है। इतने पर भी मशीन के मुक़ाबले में जानवर को रख कर खिलाना अधिक व्ययसाध्य ही नहों है वरन् उन के बोमार पड़ने और मर जाने

का भी भय लगा हुआ है। मशीन एक बार ठीक ठीक लग जाने पर तथा सुप्रबन्ध के साथ थोड़े से ही ख़र्च और कभी कभी मरम्मत करा लेने से बरसों तक काम देती है। आज इंगलेण्ड को जो उन्नति प्राप्त है उस का एक मुख्य कारण यही मशीनें हैं। वास्तव में इंगलैण्ड एक ग़रीब देश है जहां ठंड बहुत अधिक होने के कारण खेती बारी से बहुत अधिक लाभ नहीं हो सकता। इस देश में ऐसे बड़े मैदान भी नहीं हैं जहां पालतू जानवर जैसे गाय या भेड़ रखे जा सकें। इस देश में तरकारी और फल भी अधिक नहीं होते और वास्तव में यहा शलजम के अतिरिक्त कन्द मूल भी इतने अधिक नहीं होते जो यहां के थोड़े से पशुओं के खिलाने के लिए परियाप्त हो सकें। इंगलैण्ड में इतना भी नाज उत्पन्न नहीं होता कि उस की जनता के लिए १५ दिन के लिए भी काफ़ी हो सके। इस लिए इंगलैण्ड को अपने खाने की प्रायः हर सामग्री अन्य देशों से मंगानी पड़ती है।

इन सब बातों का अभाव होने पर भी इंगलेण्ड संसार में परम समृद्धिशाली देश है और यहां के रहने वाले बड़े धनी और शक्तिशाली हैं। अंग्रेज़ जाति सारी पृथिवी पर फैली हुई है। कैनेडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिणी आफ़्रिका और भारतवर्ष इत्यादि बड़े बड़े देश इस के साम्राज्य में हैं। बृटिश साम्राज्य संसार का वह सब से बड़ा साम्राज्य है जहां सूर्य किसी समय अस्त नहीं होता। वास्तव में यह सब इंगलैण्ड की मशीनों की ही महिमा है। इंगलैण्ड ही संसार में सब से पहला देश है जिस ने हाथ से चीज़ें बनाने की जगह मशीनों द्वारा बनाने की आयोजना की।

इंगलैण्ड में ही सब से पहले मशीनों द्वारा कपड़ा बनाया गया। इसी लिए संसार के अन्य देशों में यहां का बना हुआ कपड़ा सब से पहले बिकने लगा। इंगलैण्ड में यह सब वस्तुएं बनाने के लिए कोयला और लोहे के सिवाय कोई चीज़ प्राप्त नहीं होती। इसी लिए इस देश को संसार में ऐसे प्रदेश ढूंढ़ कर अपने साम्राज्य में मिलाने पड़े हैं जहां से अपने पुतलीघरों में तैयार करने के लिए उसे कच्चा माल प्राप्त हो सके। इंगलैण्ड जिन देशों से कच्चा माल ले जा कर अपने देश में मशीनों द्वारा उसकी अनेक वस्तुएं बनाता है वह प्रायः उन्हीं वस्तुओं को उन्हीं देशों में ले जाकर दस पंद्रह गुने भाव पर बेच डालता है। यही कारण है कि इंगलैण्ड के प्राधान्य के वास्तविक और प्राकृतिक साधन उस देश में उपलब्ध न होने पर भी उस देश के निवासियों ने अपनी बुद्धि, उद्योग, अध्यवसाय तथा अन्वेषण द्वारा इतनी चमत्कार-पूर्ण उन्नति प्राप्त कर ली है।

सातवां अध्याय

माल लाने ले जाने के साधन

भूविस्तार पर विजय

मनुष्य ने बहुत पुराने समय से ही अपनी संचित की हुई चीज़ों को किसी बरतन में रखने की आवश्यकता प्रतीत की होगी। आज कल सन्दूक़, थैले बोरे, बेग, बकस इत्यादि के बिना हमारा काम नहीं चल सकता। हमारे घरों में ताक़, आलमारी और चीज़ों के रखने के लिए जगह जगह पर ख़ाने बने हुए होते हैं। हांडी, पीपे और मटके इत्यादि चीज़ें रखने के लिए हर घर में मौजूद हैं। परन्तु आदिम मनुष्य के पास ऐसी कोई चीज़ नहीं थी। उस के पास न तो लकड़ी के तख़्तों को जड़ कर संदूक़ बनाने के लिए कीलें थी और न आलमारी बनाने के लिए लकड़ी के तख़्ते। जब तक मनुष्य ने बढ़ई गीरी के काम में अच्छी उन्नति नहीं प्राप्त कर ली उसके लिए इस प्रकार की कोई चीज़ बना लेना असम्भव था।

सम्भवतयः सब से पहला बरतन जिस का मनुष्य ने आविष्कार किया होगा वह घास, तिनके, सिरकी या ताड़ के पत्तों की डलिया रही होगी। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे देश में ताड़ की डलिया और पंखा बनाने का आविष्कार हुआ। यही कारण है कि आज दिन भी हिन्दुओं में विवाह के अवसर पर ताड़ के पत्रों की डलिया और पंखे सुहाग पूजा की सामग्री हो गये हैं। इस प्रकार उस आविष्कार-कर्ता की कीर्ति को चिरस्थायी बनाने का यह उत्तम प्रबन्ध

है जिसका नाम अब हम को याद नहीं है। इसी भांति सम्भव है कि चमड़े का थैला भी बहुत प्राचीन समय में बना होगा। इसी को आज कल के चमड़े के तरह तरह के बकसों और बेगों का जन्म दाता कहना चाहिए।

परन्तु यह डलिया, थैले और बकस इसी लिए नहीं बनाये गये थे कि उन में चीज़ें सुरक्षित रक्खी जा सकें बल्कि उन का सब से महत्वपूर्ण उपयोग यह था कि चीज़ों को उन में रख कर इधर उधर जहां चाहें ले जा सकें। पूव ऐतिहासिक काल में प्रायः सारा मानवकुल भ्रमणप्रिय था। उन के रहने का कोई स्थिर स्थान नहीं था। इस लिए इन चीज़ों के बनाने की बहुत ही जल्दी आवश्यकता प्रतीत होने लगी और मनुष्य ने शीघ्र ही अपनी बुद्धि और कौशल द्वारा इन की रचना कर डाली।

इस विवरण से हम इस आशय को पहुंचते हैं कि अपनी चीज़ों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिए प्राचीन काल से ही मनुष्य को ऐसे बरतनों की आवश्यकता पड़ी और इन वस्तुओं को बरतनों में रख कर लाद कर ले जाने के लिए गाड़ी इत्यादि की भी आवश्यकता प्रतीत हुई। सम्भवतयः पहले पहल चीज़ों को हांडी इत्यादि में रख कर ले जाने के लिए स्त्रियां ही लद्दू जानवरों का काम करती थीं। आज दिन भी बहुत सी असभ्य जातियों के आदिम निवासियों की स्त्रियां अपनी पीठ पर बोझ लाद कर ले जाती हैं। इटली में किसानों की स्त्रियां तरकारी अथवा फलों की भारी टोकरियां ले जाते हुए देखने को मिलती हैं। जर्मनी में स्त्रियां इसी प्रकार तरकारी और फल लाद कर ले जाती हैं।

हमारे देश में तो इस प्रथा के उदाहरण नित्य प्रति हर प्रकार के व्यवसाय में हर क़दम पर दिखायी देते हैं।

परन्तु इस प्रकार से स्त्रियों द्वारा बोझा ढुलाने का काम बहुत दिनों तक नहीं लिया जा सका और मनुष्य ने शीघ्र ही पालतू जानवरों को इस काम के लिए बहुत उपयुक्त पाया। बरसों तक घोड़े, बैल, गधे, ऊंट तथा हाथी इत्यादि जानवरों पर लाद कर माल ले जाने की प्रथा जारी रही। इस के सैकड़ों वर्ष बाद पहियेदार गाड़ी का आविष्कार हुआ। हमारे देश में गधे पर अब भी मट्टी, ईंट इत्यादि वस्तुएं लादी जाती हैं। भैंसे, बैल टट्टू और ऊंटों पर नाज के बोरे लादे जाते हैं। ब्रह्म देश में लकड़ी लादने के लिए हाथी काम में लाया जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि पहियेदार गाड़ी का रिवाज चल जाने के कारण अधिक माल लादने के लिए यही अधिक उपयुक्त पायी गयी। हमारे देश में जहां व्यापार के विकास की प्रत्येक अवस्था का दिग्दर्शन आज दिन तक किया जा सकता है इन सब साधनों का प्रयोग होता है। परन्तु यह बात निर्विवाद है कि पहियेदार गाड़ी का आविष्कार बड़े असाधारण महत्व का था क्योंकि घोड़े और बैल पीठ पर लादने की अपेक्षा गाड़ी में जोते जाकर बहुत अधिक और भारी बोझा खींच सकते हैं।

इस बात को अनुमान कर लेने में तो अब ज़रा भी कठिनाई न होगी कि पहले पहल जो गाड़ियां बनायी गयीं वे बड़ी भद्दी और भौंडी रही होंगी। इन के पहिये बनाने के लिए लकड़ी के टुकड़े काट काट कर डंडों में जोड़ दिये गये होंगे। हमारे गांवों

में इस प्रकार की आदिम अवस्थावाली गाड़ियां अब भी मौजूद हैं जिन के पहिये लकड़ी के बोटे काट काट कर बनाये जाते थे। कुछ समय के बाद इन में भी परिवर्तन और उन्नति होने लगी और अरेदार पहियों का आविष्कार हुआ। ये पहिये हलके और सुन्दर होते हैं। इस के बाद पहियों पर लोहे की हाल चढ़ाने का आविष्कार हुआ जिस के कारण पहिये में दृढ़ता आ जाने से उन की उपयोगिता में वृद्धि हो गयी। इस प्रकार नये नये आविष्कार और खोज होने के साथ ही साथ लोहे की छड़ों के अरे और धुरी बनने लगे। और खांचेदार पहिये बना कर उन पर रबड़ चढ़ाने का प्रबन्ध हो गया जिस से गाड़ियों में बैठ कर चलने में आराम की मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ गयी। इस के बाद रेल और मोटरकार के पहियों के बनाने में जो कौशल मनुष्य ने दिखाया है उसे देख कर उस के विवेक और बुद्धि की भूरि भूरि प्रशंसा करनी पड़ती है। अगर हम यह कहें कि आज कल की रेल और मोटर अब ऐसे वाहन बन गये हैं जिन में यह कला पराकाष्ठा को प्राप्त हो गयी है तो अत्युक्ति न होगी।

जब मनुष्य ने छकड़े और सवारी गाड़ी का आविष्कार कर लिया तो इनके चलाने के लिए अच्छी सड़कों की भी आवश्यकता हुई। पगडंडी और गाड़ियों की कच्ची लीक से अब काम न चल सकता था। पक्की सड़कों के आविष्कार ने मनुष्य को नये नये देशों में जाने तथा संसार का अद्भुत ज्ञान प्राप्त करने का एक अभूतपूर्व साधन उपस्थित कर दिया। रोमन लोगों की महानता-प्रदर्शक अगर और सब बातों का लोप भी हो जाय तो भी दो

हज़ार वर्ष पूर्व की उनके द्वारा बनवायी हुई कड़कें उनकी कीर्ति को चिरस्थायी बनाने के लिए बहुत उज्वल और स्थायी प्रमाण हैं। उन की बनायी हुई सड़कें दो हज़ार वर्ष बीत जाने पर भी आज दिन तक मौजूद हैं। आज दिन प्रत्येक सभ्य देश में सड़कें बनी हुई हैं और जिस देश में जितनी ही अच्छी सड़कें हैं उतनी ही अधिक उन्नति उस की सभ्यता को प्राप्त है। फ्रांस, इंगलैण्ड, जर्मनी और अमेरिका में संसार के सब देशों से उत्तम सड़कें हैं।

पृथिवीतल पर यात्रा करने के साथ ही मनुष्य ने यह बात भी खोज निकाली कि जलमार्ग द्वारा भी माल लाने ले जाने के साधन बनाये जा सकते हैं। उत्तरी अमेरिका के सरोवर प्रदेशों, पूर्व के द्वीप समूहों और स्वीडेन, रूस, ब्रह्मा तथा उत्तरी इटेली में जहां थल की अपेक्षा जल मार्ग सुगम और सुविस्तृत हैं मनुष्य को अवश्य ही जलयान बनाने की आवश्यकता प्रतीत हुई होगी। नौका के आविष्कार द्वारा ही उस ने इस अभाव को पूरा किया होगा। मनुष्य ने नदियों में वृक्षों के तने तैरते हुए अवश्य देखे होंगे। इन्हें देख कर अवश्य ही उसके विचार में यह आया होगा कि लकड़ी के तीन चार लट्ठे बांध कर एक प्रकार का बेड़ा सा तैयार हो सकता है जो नदी में तैरता रहेगा। बस यहीं पर पहली नौका का श्रीगणेश हुआ। इस के बाद जब मनुष्य ने किसी सूखे पेड़ के खोखले को नदी में तैरते हुए देखा होगा तो उसे तुरंत डोंगी बनाने का स्फुरण हुआ होगा और उस ने इस प्रकार की डोंगी बनाने के लिए किसी वृक्ष का तना तोड़ कर उस पर आग जला कर उस का एक भाग खोखला कर डाला होगा। इस के बाद किसी किसी देश में

मनुष्य ने वृक्षों की लताओं इत्यादि से टोकरी की तरह बिनकर और उस पर चमड़े का ग़िलाफ़ चढ़ा कर एक नये प्रकार की नौका का निर्माण किया होगा जो इन सब नौकाओं में अधिक हल्की और शीघ्रगामी सिद्ध हुई होगी।

किसी तेज़ बहने वाली नदी के बहाव की तरफ़ नौका-संचालन में कुछ अधिक कठिनाई नहीं होती परन्तु उस का खेना अवश्य ही दुःसाध्य है। खेने के लिए जिस यंत्र का पहले पहल आविष्कार हुआ वह अवश्य ही बांस का डंडा रहा होगा जिसे दंड की भांति प्रयोग करने के कारण आज कल के डांड का आविर्भाव हुआ जो अब तक नौका सञ्चालन के काम में आता है। इस डांड के आविष्कार करने के बाद धीरे धीरे मनुष्य ने इसका एक नया उपयोग ढूंढ़ निकाला जिस से डांडों द्वारा खेने और पतवार लगाने की विधि मालूम हो गयी।

बड़ी बड़ी नावों को पाल बाँध कर चलाने का आविष्कार किस भांति हुआ इस का पता चलाना कठिन है। परन्तु हमारा अनुमान है कि आदिम कालीन मनुष्य ने वृक्षों की पत्तियों को हवा में उड़ता हुआ देख कर ही पाल उड़ाने का ज्ञान प्राप्त किया होगा। सब से पहली पाल दार नौकायें बहुत साधारण होती थीं। किसी नाव में मस्तूल लगा कर उस में एक चौकोर पाल बाँध दिया जाता था। इस पाल के कोनों में रस्सियां बँधी होती थीं जिन को खीचने तथा ढीला करने से पाल का मुंह फेर कर नौका किसी दिशा में घेरी जा सकती थी।

पंद्रहवीं शताब्दी तक इसी प्रकार की पालदार नौकायें संसार

में चलती रहीं। उन दिनों समुद्र के किनारे ही किनारे यात्रा की जा सकती थी। मनुष्य को पृथिवी के समीप इस लिए रहना पड़ता था क्योंकि अभी तक उस ने वायु की विपरीत दिशा में नौका चलाने की कला, नहीं ढूंढ़ पायी थी। इसी लिए प्रत्येक नौका को यात्रा करते समय अनुकूल वायु की प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। उन दिनों एक देश से दूसरे देश तक नाव द्वारा यात्रा करने में समुद्र के किनारे ही किनारे जाना पड़ता था और इस लिए यात्रा बहुत सुदूर और दुर्गम भी होती थी क्योंकि किनारे के पास जल डाकुओं का भी भय रहता था। यूनान और इटली के बीच में थ्यूसीडायडीज़ नामक यूनानी इतहासकार ने एक सीधे रास्ते का वर्णन किया है जो समुद्र के बीच में होकर था। परन्तु नावों को सञ्चालन विद्या अभी इतनी उन्नत नहीं हो पायी थी इस लिए यूनानी लोग इस राह से जाने में बहुत डरते थे। पंद्रहवीं शताब्दी के अंतिम समय में क्रेयर नाम के एक अंग्रेज़ ने एक नये प्रकार का पाल और बादबान बनाया जिस के द्वारा जहाज़ तेज़ से तेज़ हवा में जा कर और इधर उधर घूमते हुए चल कर हवा के रुख़ के विरूद्ध भी चल सकते थे। इस के साथ ही साथ ध्रुवदर्शक यंत्र के आविष्कार ने मनुष्य के हाथ में नौ-सञ्चालन का एक बड़ा अभूतपूर्व साधन उपस्थित कर दिया। इन दोनों आविष्कारों से सुसज्जित होकर मनुष्यों ने अपने बाहुबल और पराक्रम द्वारा खुले समुद्र में होकर दूर देशों की यात्रा करने का सुसाहस किया। ध्रुवदर्शक एक ऐसा दिशा-सूचक यंत्र है जिस की सहायता से मनुष्य को समुद्र पर विजय प्राप्त करने में बड़ी

अद्भुत सफलता प्राप्त हुई। इसी समय अमेरिगो वैस्पूकी ने अमेरिका का पता चलाया और वास्कोडिगामा आफ्रिका की गुडहोप रास का चक्कर लगा कर भारतवर्ष आ पहुंचा। कुछ ही वर्ष बाद सुप्रसिद्ध पुर्तगाल निवासी मगीलाँ ने पृथिवी प्रदक्षिण की और इस बात का व्यवहारिक और प्रत्यक्ष प्रमाण उपस्थित कर दिया कि पृथिवी गोलाकार है। नयी दुनिया की खोज से दिग्विजय करने के लिए नये प्रदेशों का पता चला और यूरोप के प्रायः
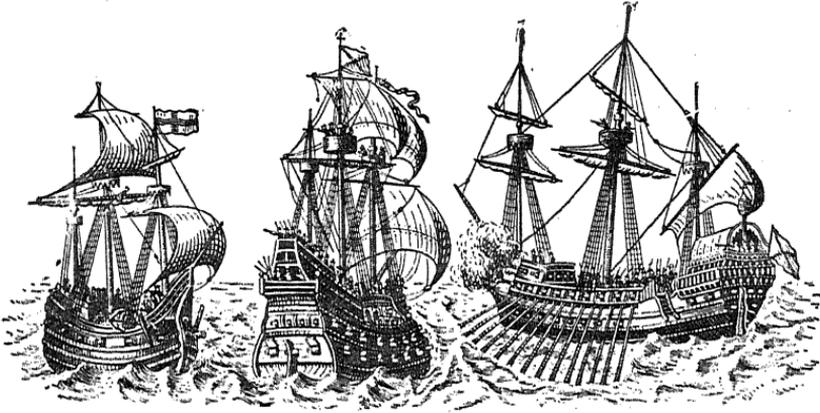
रानी एलिज़ेबिथ के समय के जहाज़

सभी देशों से विशेष कर स्पेन, पुर्तगाल, हालैण्ड, फ्रांस और इंगलैण्ड से विजय प्राप्ति के इच्छुक और मन चले योद्धाओं के झुंड के झुंड विजय और कीर्ति प्राप्त करने के साथ ही साथ उस जगन्नियन्ता की माया और महिमा के विस्तार की ज्ञान प्राप्ति के लिए कटिबद्ध होकर प्रस्तुत हो गये। इन्हीं लोगोंने मनुष्यों द्वारा प्रकृति पर विजय प्राप्ति के आधुनिक इतिहास का श्रीगणेश किया।

आठवां अध्याय

मनुष्य और उसके मित्र—पशु-संसार पर साम्राज्य

जब मनुष्य ने जंगली जानवरों को पालतू बना कर उन्हें नये नये ढंग सिखाने का काम प्रारम्भ किया तो प्रकृति पर विजय प्राप्ति का एक गहन प्रश्न सरल हो गया। ऐसा मालूम होता है कि सम्भवतयः उस ने पहले पहल इन पशुओंको इस विचार से नहीं पाला था कि वे उस के लिए उपयोगो सिद्ध होंगे। यह परिणाम अकस्मात ही उपस्थित होगया। आदिम मनुष्य के बच्चे भी आज कल के लड़के लड़कियों की भांति क्रीड़ाप्रिय थे और रोंएदार गुदगुदे जानवरों के बच्चोंसे उतना ही प्रेम करते थे जितना कि आजकल के बच्चे करते हैं। अनुमानतः किसी दिन कोई आदिम मनुष्य जंगली कुत्ते का शिकार कर लेने पर जब उस को लाश उठाने गया तो उसके छोटे छोटे पिल्लों को दया द्रवित होकर घर (अपनी कन्द्रा में) उठा लाया। यह पिल्ले उस के बालकों को बहुत पसंद आये और थोड़े ही दिनों में उनके साथ मिल कर रहने के कारण सारे कुटुम्ब के प्रीतिभाजन बन गये। बड़े होने पर ये पिल्ले स्वामिभक्त होने के कारण चौकोदारी करने और शिकार में सहायता देने में बड़े उपयोगी सिद्ध हुए।

भेड़िया, गीदड़, डिङ्गो तथा बनैले कुत्ते सब एक ही कुटुम्ब के हैं परन्तु कुत्ता ही इन में से ऐसा जानवर है जो सहज में ही पालतू

हो जाता है। आस्ट्रेलिया के डिङ्गो भी तीन चार सप्ताह में ही पालतू हो जाते हैं। परन्तु कुत्ते के शीघ्र ही सर्वप्रिय हो जाने का कारण यह था कि वह अपने मालिक के साथ शिकार पर जाता था और जिस जानवर को शिकार करने में उस के मालिक को सफलता प्राप्त न होती थी वह प्रायः उसका शिकार कर लेता था। यह देख कर शीघ्र ही उस समय के मनुष्यों को इस बात का पता चल गया होगा कि थोड़े ही से परिश्रम से वे कुत्ते से अपने लिए शिकार करा सकते हैं।

इस प्रकार शिकारी कुत्ता मनुष्य का पहला सहायक हुआ। अब तो इस जीव को मनुष्यों के साथ रहते रहते इतना अधिक समय व्यतीत हो गया है कि कुत्ता मनुष्य की आवाज़, उस का चेहरा, उस की भाषा यहां तक कि उस के विचार भी अन्य सब जानवरों की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह से समझने लग गया है। और वास्तव में यही एक ऐसा जानवर है जो मनुष्य के साथ सच्ची सहानुभूति और प्रेम रखता है।

बिल्ली भी प्रायः कुत्ते के साथ ही साथ अथवा थोड़े ही समय बाद पालतू हो गयी। सम्भवतयः इस की मित्रता का श्रेय स्त्रियों को प्राप्त है क्योंकि बिल्ली चूल्हे के पास अथवा घर के भीतर ही रहने में बहुत प्रसन्न रहती है। मनुष्यों से अधिक प्रेम करने की अपेक्षा इसे अपने रहने का स्थान ही अधिक प्यारा होता है। बन बिलार, तेंदुआ, शेर, और चीते भी इसी कुटुम्ब के जानवर हैं। परन्तु ये सब बड़े डरावने और मांस-भक्षक होते हैं। बन बिलार भी पालतू नहीं हो सकता।

हम वर्णन कर चुके हैं कि स्त्रियों ने ही पहले पहल अनाज जमा कर के रखना शुरू किया। खत्तियों में अनाज जमा रहने के कारण मूस और चूहे आने लगे और नाज को कुतर कर बिगाड़ने लगे। नाज को चूहों से बचाने के लिए पालतू बिल्ली बड़ी उपयोगी प्रतीत हुई। इस के बच्चों को स्त्रियों ने बड़े यत्न के साथ पालना पोसना शुरू किया और जब ये बड़े हुए तो इन्हों ने चूहों को मार भगाने में बड़ी सहायता दी। इस प्रकार बिल्ली भी पालतू जानवर बन गयी।

हमें इस बात का पता नहीं चलता कि बिल्ली किस युग में पालतू हो गयी। परन्तु हमें यह भली भांति मालूम है कि प्राचीन मिश्र में बिल्ली बड़ी पवित्र समझी जाती थी और यह उस देवी का वाहन मानी जाती थी जो मिश्रियों के विचार में बिल्ली की भांति अँधेरे में भी देख सकती थी। बिल्ली को पवित्र मानने के कारण ही इसका मारना पाप समझा जाता था और जब कोई बिल्ली मर जाती थी तो उस के शव को मसाला लगा कर सुरक्षित कर गाड़ दिया जाता था। यही कारण है कि प्राचीन मिश्रके राजाओं की क़ब्रों में अब भी बिल्ली के ममी * प्राप्त होते हैं। मिश्रियों के लिए बिल्ली इतनी अधिक उपयोगी और आवश्यक थी कि इस का पालना उन के धर्म का एक अंग हो गया था। यह बात किसी से अविदित नहीं है कि मिश्र कृषिप्रधान देश है और इसी लिए नाज को सुरक्षित

---

* मिश्र में प्राचीनकाल में मुर्दे के शरीर में मसाला भर कर उसे क़ब्र में रखा जाता था। इस प्रकार उसकी आकृतिज्यों की त्यों बनी रहती थी। राजाओं के तथा अन्य महापुरुषों के शव को इस प्रकार सुरक्षित रखने की प्रथा थी।

रखने में बिल्ली की उपयोगिता सर्वमान्य है। जिस प्रकार रोमनों में स्त्री और अग्नि की साथ साथ प्रतिष्ठा की जाती थी क्योंकि स्त्री ही अग्नि की सँस्थापक और प्रवर्तक समझी जाती थी उसी प्रकार मिश्रियों ने स्त्री और बिल्ली की प्रतिष्ठा एक साथ की क्योंकि यही दोनों अनाज की संरक्षिका थीं।

यूरोप के जिन देशों में बिल्लियां कम पायी जाती हैं उन में इन की रक्षा के लिए क़ानून बना दिये गये थे। सन् ९३८ ई० में बिल्लियों के संरक्षन के लिए वेल्स में एक बड़ा अनोखा क़ानून जारी था। इस क़ानून के अनुसार हर प्रकार की बिल्लियों की क़ीमत बंधी हुई थी और ऐसे बच्चों से ले कर जिनकी अभी आंखें तक न खुलने पायी थीं ख़ूब हृष्टपुष्ट बिल्लियों के दाम क़ानून द्वारा नियत थे। बिल्ली चुराने तथा खत्तियों की रक्षा करनेवाली बिल्लियों को मारने वालों को सज़ा दी जाती थी। अगर चोर पकड़ लिया जाता था तो उसे भेड़ी या भेड़ी का बच्चा बदले में देना पड़ता था तथा उस बिल्ली के बराबर गेहूं की ढेरी जुरमाने में देनी पड़ती थी। बिल्ली के बराबर गेहूं की ढेरी बनाने की बड़ी अद्भुत प्रथा थी। चोरी जाने वाली बिल्ली को सिर के बल लटका दिया जाता था और उसके सिर से पूँछ तक गेहूं का ऊँचा ढेर लगा कर चोर को देना पड़ता था।

हम यह भी वर्णन कर चुके हैं कि मनुष्य ने थोड़े ही वर्ष पूर्व माल लाने ले जाने के लिए पहले घोड़ों को लद्दू टट्टू की भांति और इस के बाद गाड़ी में जोत कर चलाने की प्रथा आरम्भ की। संसार के प्रायः हर देश में घोड़े सवारी और माल ले जाने के काम में लाये जाते थे। जहां घोड़े नहीं थे वहां मनुष्य ने किसी

दूसरे जानवर को पालतू बना कर उस से बोझा ढुलाने का काम लिया। यूरोप के पूर्वी और एशिया के पश्चिमी प्रदेशों—अरब अथवा दक्षिण-पूर्वी रूस में—घोड़े अधिक पाये जाते थे। घोड़ा बड़ा समझदार और शरीफ़ जानवर है। इस की बुद्धि भी बहुत तेज़ और विलक्षण होती है। यह इतना उपयोगी होता है कि उत्तर के हिमपूर्ण तथा गर्म देशों में भी जहां इस का रहना कठिन है मनुष्य इसे अपने साथ ले पहुंचा। घोड़ा सामान्य जलवायु के प्रदेशों में पाया जाता है और इन प्रदेशों पर विजय प्राप्त करने में इस ने मनुष्य का बहुत साथ दिया है। बोझा ढोने, सवारी करने तथा सवारी गाड़ी चलाने में घोड़ा मनुष्य का चिरस्थायी साथी है। यूरोप और उत्तरी अमेरिका के प्रदेशों में इसे हल चलाने तथा अन्य कृषि सम्बन्धी कार्यों में भी इस्तेमाल करते हैं।

भारतवर्ष, चीन, मिश्र अथवा अन्य गर्म देशों में हल चलाने के लिए बैल काम में आते हैं। भारतवर्ष में गाय सब से पहले पालतू बनायी गयी इसलिये यही इस देश का परम पवित्र और उपयोगी जानवर है। गाय और बैल भारतवर्ष के लिए परम उपयोगी हैं क्योंकि इन के बिना पञ्जाब, गंगा का दोआबा, कृष्णा, कावेरी और गोदावरी के मैदान, बिलारी और तिन्नावली के कपास के खेत और बंगाल के पाट और चावल उत्पन्न करने वाले मैदानों में कृषि-कार्य करना बहुत कठिन होता। घोड़े की भांति संसार के कई प्रदेशों में बैल भी बोझा लादने, सवारी गाड़ी खींचने तथा अन्य कृषि-कार्यों में उपयोगी पाये जाते हैं।

बोझा ढोने वाले जानवरों में गधा सब से सीधा और परिश्रमी

जानवर है। जंगली हालत में गधा भी घोड़े ही की भांति ख़ूब तेज़ दौड़ने वाला जानवर था और आज दिन भी जंगली गधा सुन्दर और तेज़ दौड़ने वाला होता है। इस के पालने में मनुष्य को अवश्य ही अनुभव हुआ होगा कि बैल की भांति यह बड़ा सीधा सादा और चुपचाप काम करने वाला जानवर है। इसीलिए उसने इस की तेज़ चाल की अधिक चिन्ता न की होगी। प्रायः गधे को बिल्कुल नासमझ और भौंदू समझा जाता है परन्तु वास्तव में कई प्रकार से वह घोड़े से अधिक समझदार और चैतन्य होता है। संसार के प्रायः सभी देशों में गधा बोझा लादने के काम आता है और कहीं कहीं सवारी गाड़ी भी खींचता है। घोड़े की अपेक्षा इसलिए गधा अधिक उपयोगी है कि वह ऐसा सादा और शुष्क भोजन खा कर जीवित रह सकता है जिसे खाकर घोड़ा शीघ्र ही मर जाय। भूमध्य सागर के निकटवर्ती कई प्रदेशों में जहां घास बहुत कम होती है गधा ही बोझा ढोने, सवारी देने तथा खेती करने के कामों में आता है। सिसली में गधा घर बनाने के लिए पत्थर ढोने में काम आता है और जब घास पक जाती है तो इस की पीठ पर इतने बड़े बड़े गट्ठर लाद दिये जाते हैं कि इस के कान और पूंछ के सिवाय और कुछ दिखायी नहीं पड़ता। ऐसा मालूम होता है मानों घास का गट्ठर स्वयं चला आता हो। भारतवर्ष में भी ईंट और कंकड़ ढोने के लिए गधा काम में लाते हैं और धोबी और कुम्हार का गधा तो इस देश का एक ख़ास दृश्य है।

गधे में घोड़े से बढ़कर एक बात यह भी है कि ऊंची नीची जगहों पर चलने में जहां घोड़े पर जाने में भय रहता है वहां इस

का पैर कभी नहीं डगमगाता और न यह कभी फिसलता है। यह अपना पैर ऐसा तौल कर रखता है कि वह ठीक जगह जम जाता है और फिसलने का कोई भय नहीं रहता। इसी लिए मैक्सिको संयुक्त राज्य अमेरिका, स्पेन तथा दक्षिणी भारत के पहाड़ी प्रदेशों में यह बड़े काम का जानवर है।

बहुत महनती और भोला भाला होने की वजह से कुछ नासमझ लोगों का विचार है कि गधे में न विवेक है न बुद्धि। वह बड़ा सहिष्णु है। "अहिंसा परमो धर्मः" की डींग मारनेवाले भारत-वासियों के लिए गधे जैसे महनती और सहनशील जानवर के साथ इस प्रकार का बर्ताव करना तथा इस प्रकार के विचारों द्वारा अपनी सफ़ाई देना कि गधा बड़ा सहिष्णु है और वह उनके दुर्व्यवहार को अनुभव नहीं कर पाता अपने हृदय की नीचता और पशुप्रकृति का परिचय देना है। जो मनुष्य प्रकृति पर विजय पाने के अभिलाषी हों और गधे जैसे महनती जानवर के साथ ऐसा नीच व्यवहार करते हों उन के लिए यह अधिक आवश्यक है कि वह पहले अपने ऊपर विजय प्राप्त करें। और यदि वह किसी जानवर की सहायता चाहते हैं तो उन के लिए यह भी परम आवश्यक है कि पाखंड और ढकोसले छोड़कर उस पशु के साथ मनुष्योचित सहानुभूति और सहृदयता का बर्ताव करें। अगर हमारे देशवासी प्रकृति पर विजय प्राप्त करने के इच्छुक हैं और मानवी श्रेष्ठता और सभ्यता में संसार के अन्य सभ्य देशों की बराबरी करना चाहते हैं तो उन के लिए यह परम आवश्यक है कि वे गधे के साथ अमानुषिक असभ्य और अन्धेरपूर्ण क्रूरता का बर्ताव छोड़

दें। अगर वे गधे की परिश्रमशीलता का अनुकरण करें तो वे अवश्य ही मानवीयता की उन्नति करने में सफल-मनोर्थ होंगे।

संसार के बहुत से देशों में माल ले आने ले जाने के लिए ख़च्चर का भी खूब उपयोग होता है। यह जानवर गधे और घोड़ी के संसर्ग से उत्पन्न हुआ है इस लिए इस में घोड़ी

ख़च्चरों की गाड़ी

की सी चपलता और गधे की सी परिश्रमशीलता मौजूद है। स्विटज़रलैण्ड, फ़ान्स, इटली, दक्षिणी अमेरिका और स्पेन के पहाड़ी प्रदेशों में खच्चर बड़ा उपयोगी जानवर है। अंग्रेज़ी सेना में यह जानवर बोझा ढोने के काम में ख़ूब आता है। ख़च्चर गधे से

अधिक मज़बूत, बैल से अधिक समझदार और घोड़े से अधिक दमवाला होता है। जलवायु के असह्य परिवर्तन में भी यह ख़ूब काम देता है। इस में एक ही बात की कमी है और वह यह है कि इस की संतान नहीं होती। यही कारण है कि इस का अभी बहुत अधिक प्रचार नहीं हो पाया है। हमारे देश में पथरीली सड़कों पर खच्चर, गधे और टट्टू से कहीं अधिक उपयोगी प्रमाणित होगा। इस की आयु इतनी अधिक होती है कि इस की संतान न होने का अभाव कुछ अधिक हानिकारक नहीं मालूम होता।

हिमालय तथा एण्डीज़ के पहाड़ी प्रदेशों में भेड़ों और बकरियों से बोझा ढोने का काम लिया जाता है। ध्रुव प्रदेशों में तो कुत्ता ही मनुष्य के साथ रह सकता है और इन प्रदेशों की खोज करने वालों की यात्राओं के वर्णन से यह प्रमाण मिलता है कि इन विस्तीर्ण बर्फ़िस्तानों में जहां घोड़ा जीवित नहीं रह सकता कुत्ते ही बर्फ़ पर स्लेज़गाड़ियां खींच कर मनुष्य की सेवा करने में बहुत उपयोगी हैं। इलास्का की सोने की खानों में एस्कीमो लोगों के कुत्तों ने बड़ा महत्वपूर्ण काम किया है। इन्हीं कुत्तों के कारण यह खानें खोदी जा सकीं। अब भी इन प्रदेशों के लोग कुत्तों पर माल लादते, सवारी करते तथा डाक ले जाते हैं। बेलजियम में कुत्ते दूध की गाड़ियां खींचते हैं तथा छोटे छोटे बच्चों की सैर करने की गाड़ियों में जोते जाते हैं। पिछले महायुद्ध में कुत्तों ने मशीनगनें भी खींची थीं। फ़ौज में तो कुत्ते इतने उपयोगी समझे जाते हैं कि कितने ही थके होने पर भी प्रत्येक सिपाही सबसे पहले अपने कुत्ते की सेवा सुश्रूषा करता है।

ध्रुव प्रदेशों में माल लाने ले जाने तथा सवारी करने के लिए बारहसिंहा बड़ा उपयोगी जानवर है। यूरोप के उत्तर में लापलैण्ड द्वीप के निवासी इसे अपनी स्लेज़गाड़ियों में जोत कर बर्फ़ के ऊपर मीलों तक सफ़र करते हैं और जब यह मर जाता है तब इसकी खाल की पोशाक बना लेते हैं जो इन प्रदेशों के कड़े जाड़े के दिनों में बहुत उपयोगी होती हैं।

बारहसिंहों की स्लेज़गाड़ी

ऊंट उन गर्म प्रदेशों में पाया जाता है जहां गर्मी और सरदी दोनों ही बहुत अधिक होती हैं। प्रकृति ने आग से जलते हुए रेतीले मैदानों में जहां पानी भी नहीं मिलता तथा बर्फ़ की चट्टानों पर सुगमता से चलने के लिए ऊंट को उत्पन्न किया है। आफ़्रिका के सहारा, भारतवर्ष के थार और साइबेरिया के गोबी नामक रेगिस्तानों में ऊंटों के कारवानों द्वारा ही सारा माल इधर से उधर पहुंचाया जाता है।

ऊंट के पेट में एक प्रकार के थैले बने होते हैं जिन में वह पानी भर लेता है और बहुत दिनों तक यह उसकी सहायता से बिना जल पिये रेगिस्तान में सफ़र कर सकता है। ऐसे प्रदेशों में जहां पानो बिल्कुल नहीं मिलता तथा और कोई जानवर जीवित नहीं रह सकता ऊंट ही बोझा ढोने और सवारी लादने के काम आता है। हज़ारों वर्ष पहले से ऊंटों पर लाद कर इन पहाड़ी और रेगिस्तानी प्रदेशों में माल ले जाने की प्रथा जारी है। इसी लिए ऊंट 'रेगिस्तानों के जहाज़' के नाम से मशहूर हैं।

हम यह बात लिख चुके हैं कि प्राचीन काल के मनुष्यों में यह एक साधारण प्रथा थी कि जो बात बड़ी उपयोगी तथा महत्वपूर्ण हो उस का करना धार्मिक कृत्य हो जाता था। यही कारण है कि रोम में अग्नि, मिश्र में बिल्ली तथा भारतवर्ष में गऊ बड़े पवित्र जानवर समझे जाते हैं। इस बात के मान लेने में कुछ अधिक कठिनाई नहीं है कि आर्य जाति ने बहुत प्राचीन समय से ही जंगली जानवरों को पालतू बना कर उनकी उपयोगिता का अनुभव करते ही यह निश्चय कर लिया कि नर खेती बारी तथा अन्य महनत के काम पर लगाये जांय और मादा जानवरों से दूध प्राप्त किया जाय। संसार में ऐसे भी प्रदेश हैं जहां घोड़े और कुत्ते को भी पवित्र माना जाता है।

परन्तु कुछ देशों में जलवायु की भीषणता के कारण पालतू जानवरों को भोज्य-पदार्थ भी बना लेते हैं। ऐसे जानवरों को मार कर खा जाना जो मनुष्य के लिए नितान्त उपयोगी हैं बहुत बुरा है। परन्तु शीत-प्रधान देशों में मनुष्यों का अनुभव है कि बिना मांस खाये निरामिष भोजन से अधिक लाभ नहीं होता।

आज यूरोप और अमेरिका तथा अन्य देशों में गाय, बैल, बकरा और सुअर खाने के काम आते हैं। इन में से सुअर ही एक ऐसा जानवर है जो केवल खाने के काम आता है। सुअर से मनुष्य को न दूध मिलता है न चमड़े की पोशिश और न ही यह जानवर बोझा ढोने के काम आता हैं। यह जानवर घास भी नहीं चरता इस लिए इसे बाड़ों में रक्खा जा सकता है। यह हर एक चीज़ खा जाता है और ऐसा प्रतीत होता है कि इस जानवर के जीवन का एक ही उद्देश्य है और वह यह है कि यह ख़ूब तन कर भोजन करे। इसलिए सुअर को ख़ूब खिला पिला कर गोश्त खाने के लिए मोटा करने में कुछ अधिक हर्ज नही हैं। यही कारण है कि प्रायाः सभी पाश्चात्य देशों में सुअर खाने के काम आता है। चीन और आयर्लैण्ड में सुअर अधिक पाले जाते हैं और आयर्लैण्ड के लोग मज़ाक़ में कहते हैं कि यही एक ऐसा जानवर है जिस के द्वारा खिलाने पिलाने का सारा ख़र्च वसूल हो जाता है। आयर्लैण्ड का उत्तरी प्रदेश छोड़कर और सारा देश अधिक उपजाऊ नहीं है और यहां के किसान भी कुछ अधिक महनती नहीं हैं। यह लोग अपने छोटे से खेत को जोत बो कर थोड़े से आलू उगा लेते हैं जिन्हें खा कर उन के कुटुम्ब का काम चलता है। यही लोग थोड़े से सुअर भी पाल लेते हैं जिन्हें बेचकर ज़मींदार की मालगुज़ारी चुका देते हैं।

मनुष्य को जानवरों से केवल यही फ़ायदा नहीं हुआ है कि उन के द्वारा उन का भोजन प्राप्त होता है तथा वह बोझा लादने ले जाने के काम में आते हैं। खेती बारी और व्यापार का श्रीगणेश

तो पालतू जानवरों की ही सहायता से हुआ है। घोड़े या बैल द्वारा हल जोते बग़ैर मनुष्य के लिए खेतीबारी करना बहुत मुश्किल था। मनुष्य स्वयं अपने औज़ारों से कड़ी धरती को इतना नहीं तोड़ फोड़ सकता जो खेती करने के क़ाबिल हो जाय। हल का अविष्कार खेतीबारी की उन्नति के इतिहास में बड़ा महत्वपूर्ण है। इस बात के मान लेने में किसी को कोई आपत्ति नहीं हो सकती कि पहले पहल हल लकड़ी के बनाये गये होंगे; और पहला हल तो किसी सूखे हुए पेड़ की जड़ ही रही होगी। स्पेन देश के कुछ भागों में आज दिन भी किसान लोग सूखे हुए पेड़ की जड़ को काट छांट कर हल बना लेते हैं और उसी से खेत जोतते हैं। भारतवर्ष, चीन और अन्य पूर्वी देशों में तो लकड़ी के ही हल काम में आते हैं। सभ्यता के विकास और लोहे की खोज द्वारा लोहे के हल बनने लगे और यह बहुत उपयोगी प्रमाणित हुए। आज कल बहुत देशों में भाप के द्वारा एंजिन से चलने वाले हलों का अविष्कार हो गया है। इन हलों के व्यवहार में रुपया भी कम ख़र्च होता है और काम भी बहुत शीघ्र हो जाता है।

मनुष्य ने जहां जानवरों को पालतू बना कर अपना सहायक बनाया वहां पक्षियों को भी पालतू बनाकर उन से बहुतेरे काम निकाले। शायद इस प्रकार का सब से पहला पक्षी मुर्ग़ी है। पहले यह पक्षी भी जंगली रहा होगा। जब मनुष्य ने मुर्ग़ी पालना शुरू किया तो उसे कदापि यह ध्यान न हुआ होगा कि मुर्ग़ी के अण्डे मनुष्य जाति के लिए इतने उपयोगी साबित होंगे। गाय, भेड़ या सुअर के पालने की अपेक्षा मुर्ग़ी पालने में बहुत कम ख़र्च

होता है और अण्डे तथा मुर्गी का गोश्त इसी प्रकार से खाने में आते हैं जैसे बकरी, भेड़ या सुअर का गोश्त। मनुष्य के लिए मुर्गी कितनी उपयोगी है इस का अन्दाज़ इसी बात से लग जाता है कि संयुक्तप्रदेश अमेरिका में हर साल मुर्गी या मुर्गी के अंडों से बीस करोड़ रूपये की आमदनी होती है। बतख़, हँस रकीं और कबूतर यह सब पक्षी भी इसी लिए पाले जाते हैं।

हम इस बात का वर्णन कर चुके हैं कि रेशम के कपड़े रेशम के कीड़े से प्राप्त होते हैं। उसी प्रकार का एक कीड़ा शहद की मक्खी है जिस के द्वारा मनुष्य को शहद प्राप्त होता है। शहद बहुत प्राचीन समय से ही मनुष्य का भोज्य पदार्थ रहा है। कई जातियों के प्राचीन इतिहास से यह पता चलता है कि वे लोग शहद की मक्खियों को पालते थे परन्तु फिर भी यह ठीक ठीक बतलाना कठिन है कि इन का पालना कब शुरू हुआ। गन्ने से चीनी बना लेने की विधि मालूम होने के पूर्व प्रायः सभी देशों के मनुष्य शहद ही को मिठाई की जगह काम में लाते थे। बहुत से देशों में अबतक यह प्रथा जारी है। दक्षिण भारत में मुठवार जाति के लोग अब तक चीनी की जगह शहद का ही उपयोग करते हैं। संसार में कैलीफ़ोर्निया, दक्षिण फ़्रान्स, स्काटलैण्ड, इटली, स्विटज़र-लैण्ड और दक्षिणी इंगलैण्ड के कुछ भागों में भी शहद बनाने तथा बाहर भेजने का व्यापार ख़ूब चलता है।

पालतू जानवरों का इतिहास बड़ा रोचक है क्योंकि मनुष्य जिन जिन देशों में गया अपने इन सहायक मित्रों को अवश्य अपने साथ लेता गया। दूर्भाग्य से कुछ ऐसे भी जानवर हैं जिन

को मनुष्य अपने साथ कदापि नहीं रखना चाहता परन्तु वह जहां जाता है वे उस के पीछे जा पहुंचते हैं। मूस और चूहे जंगल और खेतों को छोड़ कर मनुष्य के साथ घरों में, खलियान में और यहां तक कि जहाज़ में भी जा पहुंचते हैं। इसी प्रकार गौरैया अब जंगली पक्षी नहीं रही। अब वह शहरों और कसबों में रहने लगी है। यह सब इस प्रकार के जीव हैं जो मनुष्य के किसी काम नहीं आते परन्तु उस का साथ भी नहीं छोड़ते।

नवां अध्याय

मनुष्य का भोजन—वानस्पतिक-संसार पर विजय

मनुष्य ने जैसे अनेक प्रकार के पशुओं को पाल कर अपने लिए उपयोगी बना लिया और उनके द्वारा प्रकृति पर विजय प्राप्त की उसी तरह अपने भोजन के लिए भी उसने कई प्रकार के फल और अन्न चुन लिये। संसार के सभी देशों में अन्न फल अथवा तरकारी और जड़ें यही सब भोजन के मुख्य पदार्थ हैं। बहुत से देशों में चावल और बहुत से देशों में गेहूं का अधिक व्यवहार होता है। दक्षिणी आफ्रिका और दक्षिणी अमेरिका में मकई, आयरलैंड में आलू, और स्काटलैंड में जई की बड़ी खपत है।

चावल एक ऐसा अनाज है जो संसार के बहुत से देशों में खाने के काम में आता है और ऐसी भी जातियां संसार में मौजूद हैं जो केवल चावल पर ही अपना जीवन निर्वाह करती हैं। चावल की

खेती एशिया द्वीप की प्रायः सभी नदियों की तराइयों में होती है। उत्तर भारतवर्ष में गंगा, यमुना, और ब्रह्मपुत्र, दक्षिण में कृष्णा, कावेरी और गोदावरी, ब्रह्मा में ऐरावदी, अनाम में सेगून और चीन में मांग्सी नदियों की तराइयां चावल की पैदावार के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। आफ़्रिका के मिश्र देश में, अमेरिका के केलीफ़ोर्निया में और यूरोप के स्पेन और इटली आदि प्रदेशों में भी चावल पैदा होता है। चावल की खेती के सम्बन्ध में सब से अधिक आवश्यक बात यह है कि इसकी पैदावार ख़ूब होती है। स्पेन में इस की खेती वैज्ञानिक साधनों पर अवलम्बित है और ऐसा अनुमान किया जाता है कि इस देश में चावल के एक दाने से कम से कम ३०० दाने उत्पन्न होते हैं। इस की खेती में एक और उल्लेखनीय बात यह है कि इसे खाद की बहुत कम ज़रूरत होती है। और यही एक ऐसा मुख्य कारण है जिस की वजह से इस की काश्त भी बहुत होती है और इस के खानेवाले भी बहुत अधिक हैं। खाद प्रायः क़ीमती होती है और खाद डालने के परिश्रम के साथ साथ अन्य दूसरी बातें भी खेती की पैदावार को मंहगा बना देती हैं। चावल की खेती के लिए धूप और जल की अधिक आवश्यकता होती है। यह बड़ा सस्ता और बहुतायत से पैदा होनेवाला अनाज है। इसी लिए जहां चावल की खेती होती है आबादी ज़रूर घनी हो जाती है।

गेहूं और जौ प्रायः साथ ही साथ पाये जाते हैं। उत्तरी यूरोप और अमेरिका तथा उत्तर भारत में इन की खेती बहुतायत से होती है। गेहूं का आटा प्रायः सभी सभ्य देशों में काम में आता है और गेहूं ही मनुष्य का मुख्य भोजन है। जौ खाने में इतना अधिक

व्यवहार में नहीं आता जितना कि शराब बनाने में। स्काटलैण्ड आयरलैण्ड और संयुक्तराज्य अमेरिकाके कुछ प्रदेशों में जौ की शराब बनायी जाती है।

गेहूं और जौ की बालियां

बेलजियम और जर्मनी में राई की रोटी बनायी जाती है और संयुक्तराज्य अमेरिका में इस की शराब बनायी जाती है। ठंडे देशों में घोड़ों के खिलाने के लिए जई की काश्त की जाती है। स्काटलैण्ड और उत्तरी अमेरिका में इस का दलिया और रोटी बनायी जाती है।

ज्वार, बाजरा और मक्का भी बड़े उपयोगी अनाज हैं। यह ग़रीबों का मुख्य भोजन हैं और इन की करबी जानवरों के चारे के काम आती है। करबी बहुत पुष्ट करनेवाली होती है। इसी लिए दूध देनेवाले जानवरों—गाय और भैंस—को अधिक खिलायी जाती है। पाश्चात्य देशों में सुअर, भेड़, तथा मुर्ग़ियों को मोटा कर के अच्छे दामों पर बेचने के लिए करबी खिलाते हैं। इस अनाज को यूरोप में सब से पहले सन् १५२० ई० में कोलम्बस ने अमेरिका से ला कर प्रसिद्ध किया। अब तो यह सारे संसार में बहुतायत से बोया जाता है और कई बड़े बड़े देशों के मनुष्यों और जानवरों के भोजन का मुख्य पदार्थ है। आफ़्रिका और भारतवर्ष में तो करोड़ों मनुष्यों के

जीवन का यही सहारा है। गेहूं अथवा जौ की बनिस्बत इस की उपज भी बहुत होती है और शीतप्रधान तथा गरम देशों में यह सब जगह पैदा होता है। इसकी फ़सल दो महीने से ले कर ५ महीने के भीतर तैयार हो जाती है इसी लिए संसार में इन अनाजों की इतनी अधिक खेती होती है।

दक्षिणी अमेरिका के मैदानों में पहले पहल एक प्रकार का जंगली पौदा पाया गया जिस की खेती अब प्रायः सारे संसार में होती है और जो अब करोड़ों मनुष्यों के भोजन का एक मुख्य अंग हो गया है। स्पेनवालों ने सब से पहले आलू का पता लगाया। इन लोगों ने मैक्सिको और दक्षिणी अमेरिका के आदिम निवासियों को आलू की खेती करते देखा था। स्पेनवाले इसे अपने देश में ले आये और वहां से इटली और हालैण्ड में इस का प्रचार हुआ। परन्तु उन दिनों आलू की खेती इस लिए नहीं की जाती थी कि यह बड़ी आवश्यक और स्वादिष्ट तरकारी होती है बल्कि यह इस लिए बोया जाता था कि इसे अमेरिका से लाया गया था। सर वाल्टर रेले आलू को दक्षिणी अमेरिका से इंग्लैण्ड में लाया और थोड़े ही समय में यह आयरलैण्ड की मुख्य पैदावार बन गया। गेहूं आदि अनाजों के बाद आज दिन संसार में आलू की ही सब से अधिक खेती होती है। संसार के किसी भी प्रदेश में और कोई ऐसा पौदा नहीं है जो इस के समान बहुतायत से बोया जाता हो। जिस खेत में बीघे पीछे पांच मन अनाज होता है उसी खेत में कम से कम ४०० मन आलू उत्पन्न होता है। गरम देशों में इसकी पैदावार ख़ब होती है परन्तु शीत-प्रधान देशों में

भी यह उपजाया जा सकता है। आलू अब संसार के प्रायः सभी सभ्य देशों में बोया जाता है और सब तरकारियों में श्रेष्ठ माना जाता है।

अनाज, गोश्त और तरकारियों के बाद फलों को बारी आती है। प्रकृति के जंगली फलों की जगह आजकल के स्वादिष्ट रस भरे और मोठे फलों के बाग़ बग़ीचे उत्पन्न हो जाना मनुष्य द्वारा प्रकृति पर विजय पाने की रोचक कथा का एक बड़ा शिक्षा और कौतुहलपूर्ण इतिहास है। हम नासपाती का वर्णन दे कर इस मनोरंजक कहानी की अपूर्वता का दिग्दर्शन कराते हैं। यूरोप, सीरिया और चीन के प्रदेशों में जंगली नासपाती बहुतायत से पैदा होती है। इस का पौदा बड़ा सुंदर होता है। परन्तु इस का फल इतना कड़वा और कसैला होता है तथा इस का डंठल इतना दुर्गन्धपूर्ण होता है कि इस का खाना असम्भव है। इसी जंगली नासपाती द्वारा आज कल की नासपाती का विकास हुआ है। इस विकास के होने में सैकड़ों वर्ष व्यतीत हो गये। दो हज़ार वर्ष पहले रोमन लोगों ने कई प्रकार की नासपातियां तैयार की थीं और इन के नाम रोमन राजाओं के नाम पर रक्खे गये थे। इतिहासकार प्लिनी ने नासपातियों का उल्लेख करते हुए लिखा है कि इस फल का स्वाद कड़ुवा होता है इस लिए पानी या शराब में डाल कर काट कर इसे खाते हैं। आज दिन जो मीठी नासपातियां हम लोग खाते हैं उन में और प्लिनी के समय की नासपातियों में आकाश पाताल का अंतर हो गया है। फ्रांस देश के निवासियों को नासपाती बहुत पसंद है। इस लिए इन लोगों ने नासपाती की काश्त

करने में बड़ा परिश्रम और व्यय करके सफलता प्राप्त की है। कनैडा प्रदेश में जब फ़्रेञ्च लोग जाकर बसे तो इन लोगों ने नासपातियों के जगह जगह पर सैकड़ों बग़ीचे लगा दिये। डिट्रियो और मिसीसिपी की घाटियों में सैकड़ों वर्षों तक यही नासपातियों के बग़ीचे फ़्रेञ्च उपनिवेशों के स्मारक रहे।

आज कल संसार में मनुष्य अपने भोजन के लिए ही खेती नहीं करता परन्तु जानवरों के चारे के लिए भी लाखों एकड़ ज़मीन बोयी जाती है। जई, ज्वार, बाजरा और मक्का की उपयोगिता के सम्बन्ध में हम कुछ वर्णन कर चुके हैं। परन्तु इन के अतिरिक्त ऐसे कई पौदे हैं जिन की खेती केवल जानवरों के चारे के लिए ही की जाती है। अलफ़ाल्फ़ा और मेंगलवर्ज़ल इसी प्रकार की घासें हैं। उत्तरी अमेरिका की पश्चिमी रियासतों तथा आरजनटाइन में इनकी ख़ूब काश्त होती है। जानवरों के चारे के लिए आज तक जितने प्रकार की घासों का पता चला है उन सब में यह सब से अपूर्व है। कोलोरेडो में जहां इस की ख़ूब काश्त होती है इस का पौदा इतना लम्बा हो जाता है कि घोड़े पर बैठा हुआ सवार भी इस की झाड़ी में छिप जाता है। इस की जड़ें पृथिवी में ३०, ४० फ़ीट तक अंदर धंस जाती हैं। और इस घास के उगाने का एक सब से बड़ा फ़ायदा यह है कि जिस खेत की मट्टी में थोड़ा चूना या कंकड़ मिला हो उस में प्रायः २० वर्ष तक इस की काश्त निरंतर की जा सकती है और इतने वर्षों के बाद भी उस खेत की ज़मीन और चीज़ों की काश्त के लिए बड़ी उपजाऊ बनी रहती है। इस का कारण यह है कि अलफ़ाल्फ़ा हवा में से नाइट्रोजन

ले कर बढ़ती है और स्वयं पृथिवी को अधिक उपजाऊ बनाये रखती है।
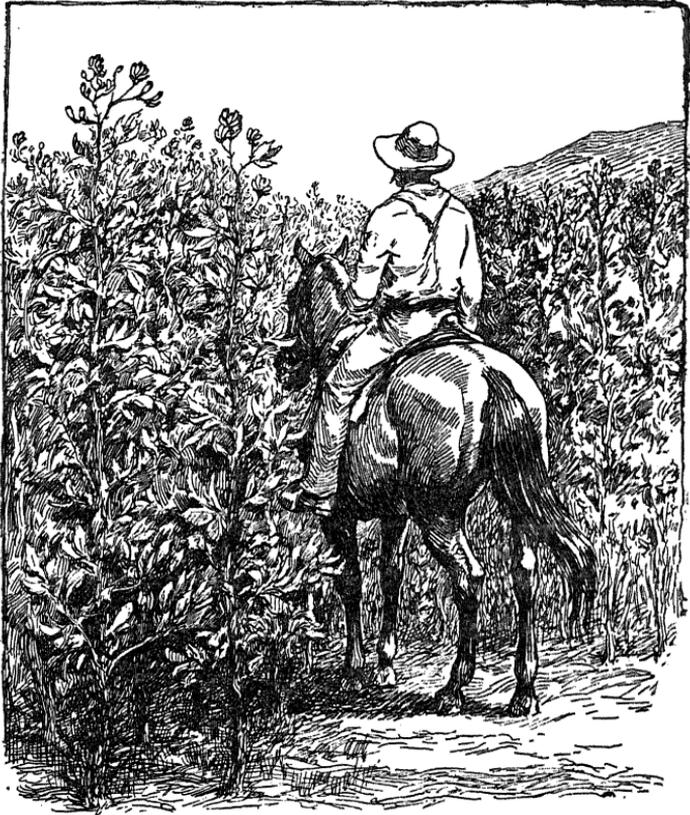
कोलोरेडो में अलफ़ाल्फ़ा घास का जंगल

प्रकृति पर विजय प्राप्त करने में मनुष्य को एक और पौदे से बड़ी अपूर्व सहायता मिली। इस पौदे का नाम सिन्कोना है और इस के वृक्ष की छाल से किनीन बनायी जाती है। दक्षिणी अमेरिका में उपनिवेश बसाने वाले स्पेन लोगों ने यहां से ले जाकर

यूरोप में इस की खेती का प्रचार किया। सन् १८६१ ई० में अंग्रेज़ लोगों ने प्रायः दस लाख रुपये व्यय करके इसे भारतवर्ष में उपजाने का प्रबन्ध किया। मलेरिया ज्वर के लिए किनीन जैसी रामबाण औषधि के आविष्कार से दरिद्र भारतवासियों को जितना अधिक लाभ पहुंचा है उस की तुलना इस थोड़े से व्यय के मुक़ाबले में कहीं अधिक है।

आज दिन नये नये पौदों और नये प्रकार की वस्तुओं को एक देश से दूसरे देश ही में नहीं परन्तु संसार भर में प्रचार कर देना उन्नति का एक मुख्य अंग माना जाता है। संसार के इतिहास में मनुष्य जाति का एक देश से दूसरे देश में बस जाना इतनी अभूतपूर्व और आश्चर्य्यजनक घटना नहीं है जितना कि वानस्पतिक संसार में किसी पौदे का सुदूर देश में जाकर नये जलवायु और बिल्कुल अपरिचित परिस्थिति में बढ़ कर फलना फूलना। गेहूं, जौ, अंजीर, खजूर तथा अन्य ऐसे ही अनाज और फल यूरोप में पूरब से पहुंचे हैं। पूर्वी देशों में ही मानवी सभ्यता का श्रीगणेश हुआ और यहीं मनुष्य ने इस सभ्यता का जागृत चमत्कार बनैले पशुओं को पालतू बना कर दिखलाया। इन्हीं देशों में बहुत तरह के जंगली कंदमूल और फल सभ्यता की उन्नति के साथ परिष्कृत हो कर बड़े स्वादिष्ट, सुन्दर और आकर्षक बनाये गये। इसी लिए पूर्वी देशों से ही मिश्र, चैल्डिया, यूनान, भारतवर्ष, रोम, और चीन जैसे विशाल साम्राज्यों का आविर्भाव हुआ। कैसे आश्चर्य्य की बात है कि चावल जो पूर्वी देशों में ही विशेषतयः उगता था आज दिन उत्तरी अमेरिका की दक्षिणी रियासतों

की ख़ास पैदावार हो गया है तथा ज्वार, मक्का और बाजरा जो सब से पहले अमेरिका में उगाये जाते थे आज दिन भारतवर्ष की बड़ी आवश्यक फ़सल हो गये हैं।

आज दिन संसार के किसी देश में जिस पौदे की उपयोगिता मनुष्यों को प्रतीत हुई बस सारे संसार के कृषक इस बात की चेष्टा में लग जाते हैं कि वे भी उसी पौदे को अपने देश में उत्पन्न कर सकें। आज कल समझदार और अशिक्षित पुरुषों में जो सब से बड़ा अंतर है वह इस बात में है कि नवीनता और उन्नतिपूर्ण बातों के अपनाने में वे कहां तक समर्थ हैं। अशिक्षित लोग नवीनता से भयभीत होते हैं या उसे तुच्छ समझते हैं। परन्तु शिक्षित लोग हर नवीनता को इसलिए जांचते रहते हैं कि वे उसे किस प्रकार अपने लिए लाभदायक बना सकें।

सिसली द्वीप में अंगूर की खेती के सम्बन्ध की एक घटना से हमारे इस विचार पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। सैकड़ों वर्ष से सिसली द्वीप में अंगूर की काश्त होती चली आ रही है और अंगूरों से शराब बनाने के कारण ही यह द्वीप बड़ा समृद्धशाली और सम्पन्न हो गया है। कुछ वर्ष गुज़रे कि इस द्वीप में अंगूरों की बेल में एक ख़ास प्रकार का कीड़ा लग जाने के कारण सारी फ़सल का सत्यानाश हो गया और लोगों को यह प्रतीत होने लगा कि उन के देश की यह सैकड़ों वर्ष की कला इस बीमारी के कारण लोप हो जायगी। परन्तु उन्होंने साहस न छोड़ा और खोज करके इस बात का पता लगा लिया कि केलीफ़ोर्निया से लाये हुए अंगूरों की बेल पर उन कीड़ों का असर नहीं होता। बस फिर क्या

था सारे देश में अमेरिका से लायी हुई इन्हीं नयी बेलों का प्रचार हो गया और उन की इस जातीय कला का जीर्णोद्धार हो गया। प्रकृति की विपरीत शक्तियों को अपने प्रयत्न से निष्फल बना कर उन पर अधिकार जमा लेना प्रकृति पर निश्चित और निश्चल विजय प्राप्त करना है।

फलदार पौदों, बेलों और फूलदार वृक्षों में, तथा अनाज और औषधियों वाले वृक्षों में—यहां तक कि सारे वानस्पतिक संसार में—जो उन्नति इस समय तक हुई है उस का एक मात्र कारण है अच्छी जाति और अच्छे बीज के चुने हुए उत्तम पौदों की कलम लगाना अथवा विभिन्न जातियों के पौदों का आपस में संयोग करना। दृष्टान्त के लिए किन्हीं दो फूलों अथवा दो पौदों की पराग-केसर को दूसरे की गर्भ-केसर से इस प्रकार संयोग करा देना कि नये पौदे में दोनों पौदों के अच्छे गुण मौजूद हो जांय। ऐसा करने के लिए यह कोई आयश्यक बात नहीं है कि ये पौदे एक ही जाति के हों। सारी उन्नति में जो चमत्कारपूर्ण बात विदित होती है वह केवल यही है कि मनुष्य अपने ज्ञान और बुद्धि के द्वारा उत्तम वस्तुओं के छांट लेने में तथा उन को श्रेष्ठता मान लेने में समर्थ है। मनुष्य का यही गुण उसे समस्त प्राणियों में सर्व श्रेष्ठ प्राणी बनाये हुए है। और इसी गुण के सहारे मनुष्य को प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का गौरव प्राप्त हुआ है।

अपने इस गुण को मनुष्य ने किस प्रकार उपयोग कर संसार में एक अद्भुत चमत्कार उत्पन्न कर दिया है इस का सजीव उदाहरण हमें लूथर बरबंक की जीवनी से प्राप्त होता है। २५ या ३० बरसों

के निरंतर परिश्रम और बड़े योग्य सहयोगियों के निःस्वार्थ और मनोयोगपूर्ण सेवाओं का यह फल हुआ कि बरबंक ने बिना गुठली के बेर और बिना काँटों के नागफनी तैयार कर डालीं तथा सैकड़ों तरह के ऐसे नये फल और फूल उत्पन्न कर दिखाये जो प्रकृति में मौजूद नहीं हैं। ऐसे ही बहुमूल्य प्रयोगों तथा अनुसन्धानों का यह परिणाम हुआ है कि मनुष्य ने प्रकृति की उन अदम्य और अपूर्व शक्तियों को अपने वश में ला कर उन के द्वारा अपने परिश्रम को कम करके अपने सुख और आनंद की मात्रा को बेहद बढ़ा लिया है।

ठीक इसी प्रकार मनुष्य ने भोजन सम्बन्धी पौदों की क़लम या पैवंद लगा कर अथवा फ़सलों का हेर फेर कर उनमें बहुत कुछ उन्नति उत्पन्न कर दी। एक पौदे का अंकुवा दूसरे पौदे के तने में लगा कर और उस की छाल से ढांक कर इस प्रकार बांध दिया जाता है कि वह अंकुवा उस दूसरे पौदे का हो जाता है। यह अंकुवा प्राय उस पौदे का होता है जो और दूसरे पौदे से कुछ अधिक विशेषताएं रखता है। जब यह अंकुवा पुराने वृक्ष का अंग हो कर उग आता है तो इस के फल और फूलों में नयी शक्ति का संचार कर अद्भुत परिवर्तन उत्पन्न कर देता है। मनुष्य ने अपनी बुद्धिमानी से पुराने वृक्षों का जीर्णोद्धार कर उन्हीं के द्वारा उत्तम और उन्नत फल फूल प्राप्त करने का यह कृत्तिम उपाय ऐसा ढूंढ निकाला है जिसके सहारे उसे प्रकृति के सरल परन्तु अधिक समय में प्राप्त होने वाले पदार्थों पर उन्नति प्राप्त करने के अपूर्व साधन मिल गये हैं।

हर प्रकार के पौदे और अनाज जब खेत में बोये जाते हैं तो पृथिवी से अपने भोजन के रूप में नाइट्रोजन और फ़ास्फ़ोरस के

योगिकों के रूप में ऐसे पदार्थों को ले लेते हैं जिनके निकल जाने के कारण पृथिवी की उर्वरा-शक्ति कुछ कम हो जाती है। यही कारण है कि प्रत्येक वर्ष एक ही खेत में एक ही तरह की फ़सल बार बार बोने से लाभ कम होने लगता है और पैदावार घटिया और कम हो जाती है। भूमि की इस कमो के पूरा करने के लिए तरह तरह के खाद दिये जाते हैं। परन्तु सब से अधिक महत्व की बात यह है कि इस तरकीब से एक फ़सल उपजा लेने के बाद बिना किसो प्रकार की खाद दिये ही दूसरी प्रकार की एक विशेष फ़सल उसी खेत में उपजायी जा सकती है। भूमि में वही योगिक पुनः उत्पन्न हो जाते हैं और उसकी शक्ति को स्थिर रखते हैं। ये वही यौगिक हैं जिन्हें पहली फ़सल ने भूमि से लेकर उसकी शक्ति को घटा दिया था। इस प्रकार से फ़सल उगाने को फ़सलों का हेर फेर करना कहते हैं। जैसे एक हो खेत में धान की एक फ़सल उगा लेने के बाद और दूसरी फ़सल उगा लेने के पहले अगर जंगली नील सन या अरहर बो दी जाय और उस की जड़ें और पत्तियां उसी खेत में रहने दी जांय तो दुबारा धान की फ़सल बोते समय हल चलाने से उन जड़ों और पत्तियों का खाद मिल जाने के कारण भूमि बहुत उपजाऊ हो जायगी और धान की दूसरी फ़सल भी ख़ूब उगेगो।

मनुष्य को प्रायः हर प्रकार के पौदों के लगाने और उन की वृद्धि करने की चेष्टा ही नहीं करनो पड़ती परन्तु उसे उन की रक्षा भी करनी पड़ती है। हर फ़सल के दो प्रकार के शत्रु होते हैं। जंगली जानवरों में स्यार, बनैले सुअर और गीदड़ इत्यादि

तोते, तथा अन्य पक्षी और चूहे गिलहरी तथा स्याही इत्यादि—एक प्रकार के शत्रु हैं। दूसरे प्रकार के शत्रु हैं:—गेरुई और दीमक आदि कीड़े तथा अमरबेल आदि लताएं तथा कई प्रकार की घासें। इन सब शत्रुओं से पौदों की रक्षा करना परम आवश्यक है। वनस्पति-संसार में मनुष्य को विजय इसी लिए प्राप्त है कि आज दिन उस के पास ऐसे साधन मोजूद हैं जिन के द्वारा उसने वनस्पतियों की वृद्धि ही नहीं की परन्तु उन की रक्षा करने में भी सफल हुआ है।

दसवां अध्याय

नहरों से सिंचाई—जलप्रदेश पर विजय

खेती करने के लिए मनुष्य को पानी की सब से अधिक आवश्यकता होती है। बिना पानी के कोई पौदा न तो उग सकता है और न बढ़ कर फल फूल दे सकता है। संसार में ऐसे बहुत से देश हैं जहां पानी के बिना हज़ारों बीघे ज़मीन बेकार पड़ी है। इन प्रदेशों में जल ले जा कर और उन्हें सींच कर हरा भरा बना देना तथा वहां फल फूल और अनाज उत्पन्न कर देना मनुष्य के लिए बड़े अद्भुत पराक्रम और अपूर्व कौशल का कार्य है। यह भी प्रकृति पर विजय प्राप्ति का एक अपूव उदाहरण है। मनुष्य ने किस प्रकार नदियों के जल से हज़ारों एकड़ पृथिवी को हरा भरा बना दिया है इस का एक अपूर्व उदाहरण हमारे ही देश की नदियों से प्राप्त होता है। यह इस देश का सौभाग्य है कि यहां की नदियां

देश के एक सिरे से निकल कर बीच के सारे मैदान को सींचती हुई उसके दूसरे सिरे तक जा पहुंची हैं। सिन्ध तथा गंगा और जमुना तथा अन्य छोटी छोटी नदियों द्वारा भारतवष का जितना बड़ा हिस्सा सींचा जाता है उतना बड़ा भाग संसार के और किसी देश का नहीं सींचा जाता। इस के अतिरिक्त गोदावरी, कृष्णा और कावेरी दक्षिण की नदियां भी अब बड़ी उपयोगी हो गयी हैं। पहले
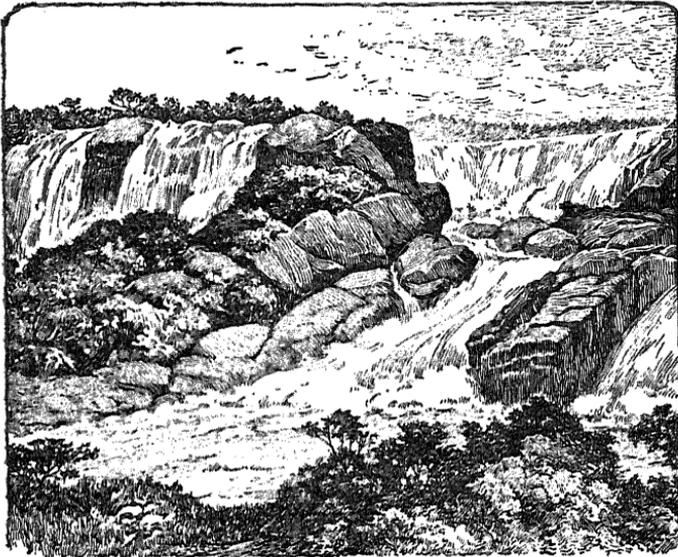
कावेरी नदी

इन नदियों का सारा पानी एक ही धारे में बहता हुआ समुद्र में जा पहुंचता था और इन के आसपास का बहुत सा प्रदेश सूखा और ऊजड़ पड़ा रहता था। किन्तु अब इन नदियों के समीप के सारे मैदान हरे भरे खेतों से सुशोभित दिखायी देते हैं।

कावेरी नदी के दृष्टान्त से हम इज नयी उन्नति को भली भांति

समझा सकेंगे। यह नदी रियासत कुर्ग के निकट पश्चिमी घाट से निकलती है और मैसूर, कोयमबत्तोर, त्रिचनापल्ली और तंजोर आदि ज़िलों में बहती हुई समुद्र में जा गिरती है। त्रिचनापल्ली के ज़िले में बरसात के दिनों में जब इस में बाढ़ आती है तो इस का पाट एक मील से भी अधिक चौड़ा हो जाता है। परन्तु समुद्र के पास पहुंच कर यह एक छोटी सी खाई की भांति रह जाती है जिस
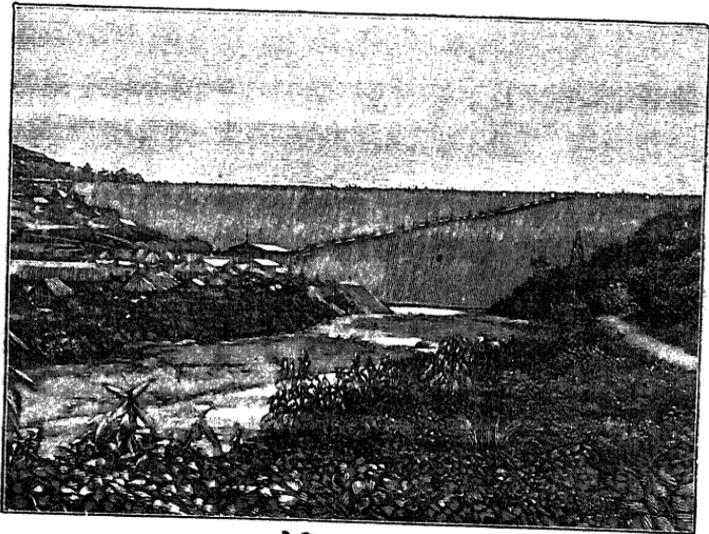
पेरियार बांध

का पाट मुश्किल से १० गज़ चौड़ा होता है। अगर कुर्ग में वर्षा बहुत अधिक न हो तब तो समुद्र तक पहुंचते पहुंचते इस में पानी रह ही नहीं जाता। इस के पानी का अधिकांश भाग नहरों और छोटे छोटे नालों में बहता हुआ सैकड़ों मील तक धान के खेतों की सिंचाई में काम आता है। तंजोर का डेल्टा लगभग ३५०० वर्ग मील है और इस बड़े विस्तीर्ण मैदान की सारी ज़मीन इसी कावेरी

नदी की नहरों और नालों द्वारा सींची जाती है। यह भूमि संसार की सब से अधिक उपजाऊ भूमियों में गिनी जाती है और इस के मूल्य का अनुमान केवल इस बात से हो सकता है कि साधारण फ़सल के समय लगभग २०० वर्ग मील के इलाक़े की मालगुज़ारी प्रायः १५ लाख रुपया होती है। यहां की भूमि अब अत्यंत उपजाऊ हो गयी है और यहां का बस्ती अब इतनी घनी है कि गंगा के दुआबे से किसी भांति कम नहीं कही जा सकती।

दक्षिणी भारत में इस बात का एक और आश्चयजनक उदाहरण मौजूद है कि मनुष्य ने प्रकृति पर विजय प्राप्त कर किस प्रकार अपने सुख और समृद्धि की अपूर्व वृद्धि प्राप्त की है। ट्रावंकोर रियासत के पहाड़ी प्रदेश से पेरिया नाम की नदी निकलती है। इस का बहाव पश्चिम की तरफ़ है। परन्तु ३० वर्ष हुए कि मद्रास सरकार और ट्रावंकोर सरकार ने एक ऐसा अपूर्व बांध बना दिया कि इस दरिया का बहाव पूर्व की तरफ़ को मुड़ गया और वैगई नदी की नहरों के साथ इस की नदी और नालों का पानी आस पास के मैदानों को सींचने के काम में आने लगा। पेरियार बांध बनाने में लाखों रुपये व्यय हुए और हज़ारों आदमियों ने कई वर्ष तक इस असाधारण और कौतूहलवर्धक कार्य को सम्पादन करने में योग दिया। इसी बांध की बदौलत आज दिन मदूरा और रामनद इलाक़ों में अब नहरों का जाल सा बिछ गया है और हज़ारों बीघे भूमि खेती के योग्य हो गयी है। इस बांध के बनने के पूर्व इन प्रदेशों में जल न मिल सकने के कारण हज़ारों बीघे ज़मीन ऊसर पड़ी हुई थी। हाल ही में सक्कर बांध बन जाने के कारण

बीकानेर की मरुभूमि अब थोड़े ही बरसों में शस्य श्यामला हुई जाती है।

इसी प्रकार अमेरिका में केलीफ़ोर्निया प्रदेश भी नहरों की सिंचाई के कारण खब हरा भरा हो गया है। दक्षिणी केलीफ़ोर्निया में सिंचाई के लिए नहरें खुलने से पहले सारी भूमि केवल भेड़ बकरी चराने के काम आती थी और प्राय: ढ़ाई रुपया फ़ी एकड़ के हिसाब से मिल जाती थी। नहरें और नाले बन जाने के पश्चात सिंचाई शुरू होते ही इसी भूमि का मूल्य बढ़ कर सवा तीन सौ रुपया प्रति एकड़ हो गया है। अब इस प्रदेश में हज़ारों एकड़ नारंगियों के बाग़ों से लदे हुए हैं और ऐसे बाग़ प्रायः डेढ़ हज़ार रुपया फ़ी एकड़ से भी अधिक मूल्य में मिलते हैं। अब इस भूमि की उपजाऊ शक्ति इतनी बढ़ गयी है कि डेढ़ हज़ार रुपये एकड़ वाले नारंगी के बग़ीचे से तो आधे दाम पहली ही फ़सल में निकल आते हैं। अरिज़ोना, कोलोराडो, ऊटा, उरेगों आदि प्रदेशों में भी अब नहरों की सिंचाई के कारण बड़ी अद्भुत उन्नति हो गयी है।

मनुष्य ने पानी के बहाव की शक्ति को काम में ला कर पंचक्कियों का आविष्कार कर किस प्रकार अपनी सुविधा बढ़ा कर अपनी उन्नति का मार्ग विस्तारित किया इस का वर्णन हम पहले कर चुके हैं। पिछले ५० वर्षों के अन्दर बड़ी अद्भुत और अपूर्व उन्नतियां हो गयीं। उत्तरी अमेरिका में नयागारा जलप्रपात की अद्भुत शक्ति को अपने वश में करके मनुष्य ने इस जलप्रपात-शक्ति को विद्युत-शक्ति में परिवर्तित कर डाला है और इस विद्युत द्वारा शहरों और क़स्बों के हज़ारों मकानों, अस्पतालों, दुकानों तथा पुतलीघरों में बिजली की

रौशनी का प्रकाश पहुंचा कर बड़ा अद्भुत परिवर्तन कर दिया है।

मैसोर में कावेरी नदी के जलप्रपात द्वारा जो विद्युत उत्पन्न की जाती है उस से मैसोर, बंगलोर और कोलारकी सोने की खानों में प्रकाश पहुंचाया जाता है। अन्य देशों में जलप्रपात और चक्रगति मोटरों के संयोग से बड़े बड़े पुतलीघरों के ऐंजिन
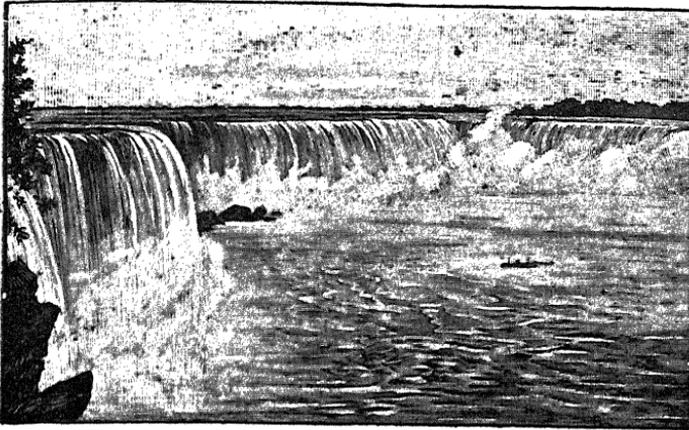
नयागारा जलप्रपात

चलाये जाते हैं। इन सब मशीनों के आविष्कार में मनुष्य ने पानी को अपना सहायक बना कर उसकी अद्भुत शक्ति से ऐसे विचित्र और कठिन कार्य सम्पादित कर लिये हैं जो थोड़े ही समय पहले बड़े कौतूहलपूर्ण और मनुष्य की शक्ति से परे मालूम होते थे।

अगर हम भारतवर्ष के जन-संख्या तथा उपज वाले मानचित्रों को ध्यान पूर्वक देखें तो हमें पानी के मूल्य का कुछ अनुमान हो जायगा। भारत के मानचित्र में सब से घनी आबादी उन प्रदेशों

की है जिन में हो कर बड़ी बड़ी नदियां बहती हैं और जिन की घाटियों में धान की खेती होती है। भारतवर्ष के अधिकांश मनुष्यों की ख़ुराक चावल है इस लिए यह आवश्यक ही है कि जहां चावल पैदा हो वहां की जन-संख्या अधिक हो और वहां बड़े बड़े नगर बस जांय।
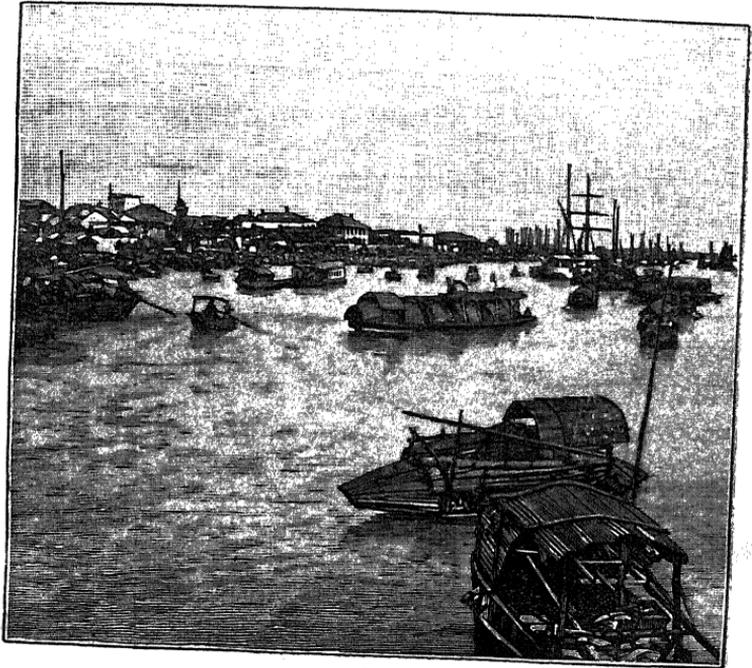
कान्टन बंदरगाह

नदियां हमारे लिए दो प्रकार से उपयोगी हैं। एक तो इन के द्वारा हमारी भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ जाती है और वह खेती बारी के काम की हो जाती है। दूसरे नदियों की राह एक प्रदेश का माल दूसरे प्रदेश में भेजने में व्यापारियों को बड़ी सुविधा

होती है। भारतवर्ष की भांति चीन में भी नदियों की घाटियों में ही अधिक जन-संख्या मौजूद है।

चीन में आज तक जन-संख्या की गणना नहीं की गयी परन्तु हम यह बात निश्चित रूप से कह सकते हैं कि चीन के बड़े बड़े नगर नदियों के किनारे आबाद होने के कारण बड़े घने बसे हुए हैं और संसार के विशाल नगरों में गिने जाते हैं। कांन्टन शहर में जिस की जन-संख्या ५० लाख के क़रीब है लाखों आदमी नदी के ऊपर डोंगियों के मकानों में रहते हैं। चीन के और प्रदेशों में नदियों द्वारा लोग इस प्रकार आते जाते हैं और व्यापार का इतना माल चलता है जैसा अन्य देशों की सड़कों पर! नदियों के किनारे पर सैकड़ों गांव और शहर बसे हुए हैं। नदियों से ज़रा दूर निकलते ही सारा प्रदेश ऊजड़ है जहां न खेती होती है और न मनुष्यों की आबादी ही घनी है।

ग्यारहवां अध्याय

भाप, गैस और बिजली—पदार्थ पर विजय

हम पिछले अध्यायों में इस बात का वर्णन कर चुके हैं कि पनचक्की और चक्रगति मोटरों के आविष्कार में मनुष्य ने जलप्रपात की शक्ति द्वारा काम लेकर अपनी बुद्धिमत्ता और कौशल का परिचय दिया है। परन्तु इस से भी अधिक महत्वपूर्ण आविष्कार यह हुआ कि मनुष्य ने भाप की अद्भुत शक्ति का पता लगाकर भाप के ऐंजिन का आविष्कार किया। यह बात तो सैकड़ों वर्षों से मनुष्य को मालूम थी कि गरम करने से जल तथा अन्य द्रव पदार्थों का तापक्रम बढ़ते बढ़ते एक ऐसी अवस्था आ जाती है जब द्रव की अवस्था में परिवर्तन हो कर उस की गैस बन जाती है। यह गैस आस पास की वायु में मिल कर तथा ठंडी हो कर भाप के धुंधले बादल के रूप में दिखायी देती है। गैस बनने में द्रव का आयतन बढ़ता जाता है यहां तक कि अगर उस बर्तन का मुंह बंद कर दिया जाय जिस में द्रव की गैस भरी हुई हो तो (इस प्रकार आयतन बढ़ कर) गैस में फैल कर इतनी अधिक शक्ति उत्पन्न हो जाती है कि वह उस बर्तन को फोड़ कर बाहर निकल जाती है। यह सब बातें जानने पर भी बहुत समय बाद मनुष्य ने यह अनुसन्धान कर पाया कि भाप की शक्ति द्वारा वह किस प्रकार अपना काम चला सकता है। जेम्स वाट ने सन् १७६६ ई० में सब से पहले एक ऐसा यंत्र बनाया जो भाप के ऐंजिन का जन्मदाता है।

आज कल रेलगाड़ी और जहाज़ चलाने में भाप का ऐंजिन बहुत अधिक काम में आता है। पुतलीघरों के चलाने में भी इस का प्रयोग होता है। परन्तु इतना अधिक नहीं। इस का कारण यह है कि अब तेल और पेट्रोल इत्यादि के ऐंजिन बन गये हैं जो भाप के ऐंजिन से अधिक छोटे होते हैं और जिन के चलाने
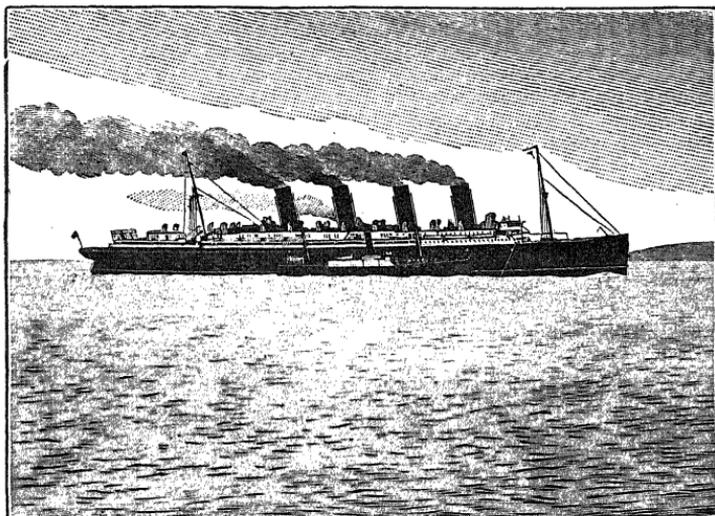
सागरगामी जहाज़

में व्यय भी कम होता है। परन्तु फिर भी भाप का ऐंजिन इन सब ऐंजिनों से अधिक सुविधाजनक है क्योंकि इस की गति बड़ी सरलता से घटायी और बढ़ायी जा सकती है। यह बात अन्य ऐंजिनों में इतनी सुगमता से दांतेदार पहियों के लगाये बिना नहीं की जा सकती। रेलगाड़ी से पहले भाप की नाव का अविष्कार हुआ और उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में सब से पहली नाव

भाप द्वारा चलायी गयी। इस के बाद ही जहाज़ के एंजिन तथा भाप बनने के बायलरों में अद्भुत उन्नति हुई। इस के बाद भाप की शक्ति द्वारा चलाये जानेवाले यंत्रों की बनावट में भी बहुत कुछ हेर फेर हो गया। सब से पहले जहाज़ डांड पतवार द्वारा चलाये जाते थे और यह डांड धुरीदार पहियों के घुमाने से चलते थे और यह पहिये भाप की शक्ति से घूमते थे। अब नदियों में चलने वाली छोटी छोटी नावें तो ज़रूर इसी प्रकार से चलायी जाती हैं परन्तु स द्र में चलने वाले जहाज़ों में दो दो और तीन तीन पेंचदार पंख (propeller) जहाज़ के पृष्ठ भाग में लगे होते हैं जिन के घुमाने से जहाज़ की गति घटायी और बढ़ायी जा सकती है। इस के पश्चात् एक उन्नति और भी हुई और वह थी चक्रगति मोटरों को भाप की शक्ति से चलाना। इस नये आविष्कार का प्रभाव यह हुआ कि अब जहाज़ों की गति पहले से कई गुनी बढ़ गयी है और संसार में सब से तेज़ चलने वाले डाक के जहाज़ों में भाप से चलने वाली यही चक्राकार मोटरें लग गयी हैं।

ऐंजिनदार नाव के अविष्कार के बाद रेलगाड़ी का आविष्कार हुआ। इस की उन्नति बड़ी शीघ्रता से हुई और आज कल के भीमकाय रेल के ऐंजिन और स्टीफ़िन्सन द्वारा बनाए हुए सब से पहले "राकट" में आकाश पाताल का अन्तर हो गया।

जब इंग्लैण्ड में पहले पहल भाप के ऐंजिन द्वारा रेलगाड़ी चलने लगी तो लोगों ने मूर्खता और अज्ञान के कारण बड़ा भारी विरोध किया। परन्तु कुछ ही वर्षों में इस आविष्कार द्वारा जो असाधारण उन्नति हुई तथा मनुष्यों की यात्रा सम्बन्धी सुविधाओं

में जो अद्भुत परिवर्तन हो गये उन के कारण यह विरोध शीघ्र ही मिट गया। आज दिन तो मनुष्य की उन्नति में भाप के एंजिन और रेलगाड़ी ने जो अद्भुत चमत्कार उत्पन्न कर दिया है उसे सभी लोग मानते हैं। आज दिन संसार में रेल बनाने का व्यवसाय बहुत उन्नत हो गया है और यही संसार का सब से बड़ा व्यवसाय समझा जाता है। संयुक्तराज्य अमेरिका में संसार भर में सब से अधिक रेलें हैं। इन प्रदेशों में रेलों का जाल सा बिछा हुआ
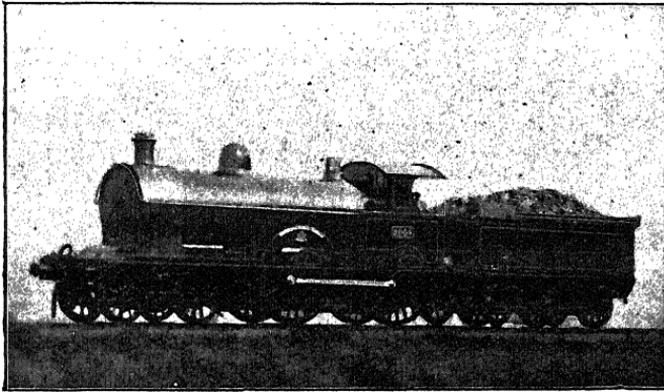
रेलगाड़ी

है। इन रेलों की संख्या २५०० से भी अधिक है। अब तो दुर्गम पहाड़ों और बयाबानों को तोड़ती फोड़ती हुई सैकड़ों रेलें संसार में बन गयी हैं। दुनिया के उन प्रदेशों में भी अब रेलें पहुंची जा रही हैं जहां मनुष्य का जाना असम्भव नहीं तो अत्यंत कठिन अवश्य था। यूरोप के एक सिरे से दूसरे सिरे तक तथा यूरोप से एशिया के कई प्रदेशों तक अब रेल जाती है। बड़े बड़े पहाड़ और जंगल तथा बड़ी तेज़ बहने वाली नदियों पर विजय प्राप्त कर

रेल अब एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश तथा एक द्वीप से दूसरे द्वीप में निकल गयी है। भारतवर्ष में भी कलकत्ते से पेशावर होती हुई खैबर दर्रे को पार करती हुई रेल बन गयी है। हमारे देश में रेलों के कारण एक बड़ा भारी उपकार यह हुआ है कि अकाल के समय में देश के एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में अकाल-पीड़ितों की सहायता के लिए अनाज भेजना अब बहुत सुगम हो गया है। इस कारण अकाल के दिनों में अब हज़ारों आदमियों की जान बच जाना सम्भव हो गया है।

जिस प्रकार मनुष्य ने पानी और भाप की शक्ति द्वारा इतनी अद्भुत उन्नति की है उसी प्रकार विद्युत शक्ति के आविष्कार ने भी मनुष्य के वैभव को बहुत चमत्कारपूर्ण बना दिया है। विद्युत क्या चीज़ है इसे कोई नहीं जानता। जिस प्रकार हम हवा के देखने में असमर्थ हैं उसी प्रकार हम बिजली को भी नहीं देख सकते। परन्तु जैसे हम हवा और उस के प्रभाव को देखते हैं उसी प्रकार हमें विद्युत और उस के प्रभावों का अनुभव है। आज तक वैज्ञानिक अनुसन्धान द्वारा विद्युत के सम्बन्ध में जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उस के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि विद्युत विश्वव्यापी है तथा सारे जीवन का मूलतत्व है। बिजली की शक्ति अभी हाल ही में मनुष्य को मालूम हुई है परन्तु फिर भी अपनी बुद्धिमत्ता और चतुराई से मनुष्य ने बिजली द्वारा सैकड़ों अद्भुत काम कर डाले हैं। और हर रोज़ इस शक्ति के नवीन चमत्कार मनुष्य के अनुसन्धान द्वारा प्रगट होते चले जा रहे हैं। प्रायः १५० वर्ष गुज़रे जब भाप की शक्ति का आविष्कार हुआ परन्तु इस थोड़े से

समय के भीतर ही इस आविष्कार ने संसार की बिल्कुल काया पलट कर दी। मनुष्य का विद्युत सम्बन्धी ज्ञान अभी प्रारम्भिक दशा में है परन्तु हम इस दशा में ही यह कह सकते हैं कि भाप के युग के बाद अब विद्युत का युग प्रारम्भ हो गया है। कौन कह सकता है कि इस विद्युत की शक्ति द्वारा संसार में कितना अपूर्व, अद्भुत और कल्पनातीत परिवर्तन उपस्थित हो जायगा जिस के प्रभाव से मनुष्यों के जीवन तथा उनके विचारों में भी असाधारण परिवर्तन उपस्थित न हो जायगा।
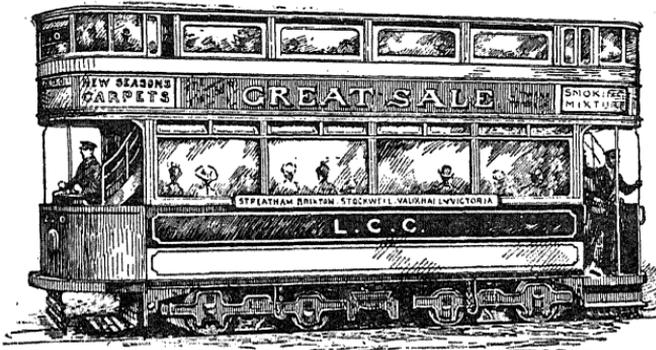
बिजली की ट्रामगाड़ी

आज कल कई प्रकार की गाड़ियां बिजली की शक्ति से चलायी जाती हैं। संसार के बहुत से बड़े बड़े शहरों में बिजली की ट्राम गाड़ियां नित्य देखने में आती हैं और अमेरिका तथा यूरोप के कई प्रदेशों में बिजली की रेलगाड़ियां भी चल गयी हैं जो प्रायः पृथिवी के नीचे सुरंगों में होती हुई जाती हैं। बिजली के डायनेमो द्वारा अब सैकड़ों पुतलीघरों की मशीनें चलायी जाती हैं और ऐसा प्रतीत हो रहा है कि शीघ्र ही बिजली के ऐंजिन भाप के ऐंजिनों का

स्थान ले लेंगे। इस के मुख्य कारण यह हैं कि पहले तो बिजली बहुत सस्ती पड़ती है फिर कोयले की कालिख और धुंए इत्यादि का इस में कोई काम नहीं इस लिए सफ़ाई भी ख़ूब रहती है। तीसरे बिजली की गाड़ी का ऐंजिन भाप के ऐंजिन की अपेक्षा बहुत जल्दी तेज़ गति को प्राप्त कर लेता है तथा इन रेलों की गाड़ियां बहुत हलकी होने के कारण इन के बनाने में बड़ी किफ़ायत पड़ती है।

इसी प्रकार बिजली की शक्ति ने मनुष्य को देश काल के विस्तार पर विजय प्राप्त करने में बड़ी अद्भुत सहायता दी है। सन् १८४३ ई० में अमेरिका निवासी फ़िनले मोर्स ने तारों के खम्भे खड़े कर बिजली की शक्ति द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक ख़बर भेजने को विधि यानी तार का अविष्कार किया। इस तार द्वारा ख़बर भेजने की सारी परिक्रिया बिजली के इस गुण पर अवलम्बित है कि धात के तार के किसी एक सिरे पर विद्यत-सञ्चार होने से किसी सुदूर स्थान के दूसरे सिरे तक विद्युत प्रवाहित की जा सकती है। अगर इस तार के पहले सिरे के साथ एक प्रकार की घंटी लगा दी जाय तो तार का दूसरा सिरा दबाते ही विद्युत-सञ्चार होने से तार के पहले सिरे पर घंटी बजने लगेगी। इसी प्रकार अगर दूसरे सिरे पर भी घंटी लगा दी जाय तो किसी एक सिरे को दबा कर विद्युत-प्रवाह होने से जो शब्द इस घंटी में होगा वही दूसरी घंटी में भी सुनायी पड़ेगा। इस का कारण यह है कि शब्द की भांति बिजली में भी स्पन्दन-क्रिया होती है और यह स्पन्दन तार के एक सिरे पर उत्पन्न होते ही सारे तार में प्रेरित हो कर दूसरे सिरे पर उसी प्रकार के स्पन्दन उत्पन्न कर देता है। यह आविष्कार करते ही

मोर्स ने एक प्रकार के नये संकेतों द्वारा अक्षरों का रूप बना दिया। इन संकेताक्षरों को 'मोर्स संकेताक्षर' कहते हैं। उदाहरण के लिए यदि A कहना हो तो एक ह्रस्व और एक दीर्घ संकेत करेंगे। और एक दीर्घ और एक ह्रस्व संकेत से अक्षर N समझा जायगा। तीन ह्रस्व संकेतों से S बनेगा और तीन दीर्घ संकेतों से O बनेगा। इस प्रकार इन बिन्दु और रेखाओं के संकेत से मोर्स ने सारी वर्णमाला बना डाली। तार के इस आविष्कार द्वारा देश का विस्तार कितना कम हो गया तथा मनुष्य कितनी शीघ्रता से और कितने थोड़े समय में संसार के सुदूर स्थानों की बातों का पता चला लेता है यह मनुष्य द्वारा प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का एक बड़ा कौतूहलवर्द्धक रहस्य है।

मोर्स के इस आविष्कार के पश्चात तार ख़बर भेजने की प्रणाली में दो नयी उन्नतियां हुईं। पहला तो समुद्रस्थ तार का आविष्कार है जिस के द्वारा समुद्र में हो कर एक प्राय-द्वीप से दूसरे प्राय-द्वीप तक खबर भेजी जा सकती है। परन्तु इस से भी अधिक आश्चर्यजनक बात बेतार के तार की है जिस के द्वारा मारकोनी ने सर ओलीवर लाज की सहायता से संसार में एक नया युग स्थापित कर दिया है। मारकोनी के इस अपूर्व और अद्भुत आविष्कार का उपयोग आज दिन सब जहाज़ों पर होने लगा है। यदि किसी जहाज़ पर बीच समुद्र में आपत्ति आ जाती है तो इस यंत्र की सहायता से वह तुरंत मारकोनीग्राम भेज देता है और सैकड़ों मील तक अन्य जहाज़ों को उस की आपत्ति का संदेश मिल जाता है। यह सूचना पाते ही वे तुरंत उस की सहायता के लिए दौड़ जाते हैं और उस के

मुसाफ़िरों और माल असबाब को बचाने की कोशिश करते हैं। इस प्रकार इस अद्भुत आविष्कार द्वारा मनुष्य ने समुद्र पर विजय प्राप्त कर समुद्र पर घटित होने वाली जहाज़ी दुर्घटनाओं में बहुत कुछ रोक थाम करने की शक्ति प्राप्त कर ली है।

इस से भी अधिक आश्चर्य और सुविधाजनक आविष्कार टेलीफ़ोन का है जिस के द्वारा मिनटों में सैकड़ों मील की दूरी पर बैठे हुए मित्र से वार्तालाप का सुयोग प्राप्त हो सकता है। कलकत्ते से बम्बई तक चिट्ठी पहुंचने में प्रायः ३६ घंटे लगते हैं। तार द्वारा कुछ घंटों में ही संदेशा पहुंच जाता है परन्तु टेलीफ़ोन द्वारा कुछ मिनटों में ही सारा वार्तालाप किया जा सकता है। इस प्रकार टेलीफ़ोन के आविष्कार से देश काल का विस्तार और भी अधिक संकीर्ण हो गया है। अब बेतार के टेलीफ़ोन का भी आविष्कार हो गया है और हम अपने घर बैठे हुए संसार के दूर से दूर प्रदेशों में अपने मित्रों से कुछ मिनटों में ही वार्तालाप करने में समथ हो गये हैं।

मनुष्य ने दो प्रकार की प्राकृतिक गैसों का भी उपयोग किया है। इन के नाम हैं कोलगैस और पेट्रोल। हम इस बात का वर्णन कर चुके हैं कि पत्थर का कोयला बहुत सस्ता इंधन है। यह गृहस्थों के काम में भी आता है और व्यापारी नगरों के पुतलीघरों की मशीनें भी इस के द्वारा चलायी जाती हैं। इस के द्वारा कोल-गैस बना कर मनुष्य ने बड़ा सस्ता और स्वच्छ प्रकाश करने का साधन प्राप्त कर लिया। मनुष्य की सभ्यता के प्राथमिक युग से मट्टी के दियों में तेल जलाकर प्रकाश उत्पन्न करने का परिचय

मिलता है। इस के बाद मोमबत्तियों का आविष्कार हुआ और फिर कोलगैस को जला कर बड़ी तेज़ और साफ़ रोशनी करने का साधन मिल गया। यह प्रकाश स्वच्छ भी है और सस्ता भी परन्तु इस आविन्कार से जो अद्भुत और अपूर्व लाभ हुआ उस का वर्णन करने के लिए एक नये ग्रंथ की आवश्यकता है।

पेट्रोलियम या पैराफ़ीन को साफ़ करने से पेट्रोल प्राप्त होता है। जब पेट्रोल हवा में मिलता है तो इस की प्रज्वलन-शक्ति इतनी अधिक बढ़ जाती है कि यह गैस विस्फ़ोटक हो जाती है। इसी
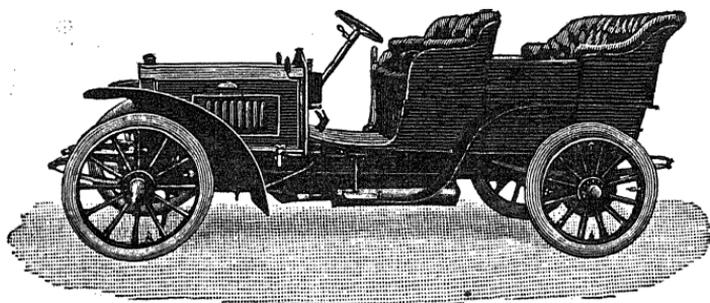
मोटरकार

लिए मोटरकार इत्यादि के ऐंजिन को चलाने के लिए पेट्रोल काम में लाया जाता है। इस प्रकार के ऐंज़िन में बिजली की चिनगारी द्वारा विस्फ़ोटन उत्पन्न करने से यह गैस भड़क उठती है और डंड और हत्ते के चलने से गति उत्पन्न हो जाती है। मोटरकार तथा अन्य मोटर ऐंजिन चलाने के लिए पेट्रोल ही काम में लाया जाता है। यह पेट्रोल मानवी सभ्यता की उन्नति में बड़ा भारी युगप्रवर्तक हो गया है क्योंकि इसी के द्वारा हवाईजहाज़ के ऐंजिन चलते हैं। बैलगाड़ी की चाल की तुलना अगर हम आज के दिन

मोटरकार की चाल से करें तो हमें पता चलेगा कि यात्रा करने तथा माल लाने ले जाने के साधनों की गति में अब कितनी असाधारण उन्नति हो गयी है। जितना काम बैलगाड़ी दिनभर में कर पाती थी वह अब मोटर द्वारा कुछ घंटों में हो जाता है तथा हवाईजहाज़ द्वारा इस से भी कम समय और अधिक शीघ्रता से हो जाया करेगा।

बारहवां अध्याय

गुरुत्वाकर्षण पर विजय

इन सब बातों से भी अधिक कौतूलपूर्ण विजय मनुष्य ने गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त पर प्राप्त की है। हम प्रायः वस्तुओं को हलकी या भारी कहा करते हैं। यह कहने के बजाय कि प्रत्येक चीज़ में वज़न होता है यह कहना अधिक ठीक होगा कि प्रत्येक वस्तु पृथिवी की आकर्षण-शक्ति द्वारा उस की तरफ़ को खिंचती है। न्यूटन ने पेड़ से सेब को गिरते हुए देख कर इस सिद्धान्त को स्थिर किया कि पृथिवी प्रत्येक वस्तु को चाहे वह ठोस हो द्रव हो या गैस के रूप में हो आकर्षण-शक्ति द्वारा अपनी ओर खींचती है। हम इस बात को प्रमाणित कर सकते हैं कि हवा का भी भार होता है अथवा यों कहना चाहिए कि हवा भी पृथिवी की इस आकर्षण-शक्ति द्वारा खींची जाती है। जब इस सिद्धान्त के अनुसार संसार में कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिस पर पृथिवी की इस आकर्षण-शक्ति

का प्रभाव न पड़ता हो अथवा यह कहा जाय कि संसार में हल्की से हल्की वस्तु भी पृथिवी की आकर्षण-शक्ति द्वारा खींची जाती है तो फिर इस प्रश्न के उत्तर देने की बड़ी ज़रूरत है कि बतख़ पानी में किस प्रकार तैरती है अथवा पक्षी हवा में कैसे उड़ते हैं या जहाज़ समुद्र तल पर कैसे चलते हैं और मनुष्य हवाई जहाज़ में कैसे उड़ सकते हैं।

हम इस बात का उल्लेख कर चुके हैं कि मनुष्य ने अपनी बुद्धि और कौशल द्वारा ही नौका का निर्माण किया होगा। उसने यह देख कर कि पेड़ों की छाल अथवा घास और फूस के तिनके पानी पर तैरते हैं इस बात का अवश्य अनुमान कर लिया होगा कि यह चीज़ें पत्थर या धात के टुकड़ों से अवश्य हल्की हैं। इस अनुसन्धान के बाद उसे इस बात का भी पता चल गया होगा कि गरी के खोपड़े जैसे खोखले पात्र अथवा बांस जैसी पोली लकड़ियों में जल पर उतराते रहने का गुण मौजूद है। इस बात को जान लेने के बाद डोंगी, नाव या जहाज़ बना लेना कुछ अधिक महत्व की बात नहीं रह जाती। पिछले अध्याय में हमने इस बात का भी उल्लेख किया है कि जहाज़ और नाव मनुष्य के लिए कितने उपयोगी प्रमाणित हुए हैं। अथवा इन के आविष्कार से समुद्री यात्रा कितनी सुगम और सुलभ हो गयी है। परन्तु हम यह कह सकते हैं कि वैज्ञानिक अनुसन्धान की दृष्टि से इस सिद्धान्त का आविष्कार संसार के लिए बड़ा महत्वपूर्ण है। क्योंकि इस आविष्कार द्वारा मनुष्य ने प्रकृति के एक परम व्यापक नियम पर विजय प्राप्त की है। मनुष्य द्वारा जहाज़ के आविष्कार ने प्रकृति के इस नियम का पूर्णतः उल्लंघन और

प्रतिरोध किया है कि भारी चीज़ पानी में डूबती और हल्की चीज़ पानी पर तैरती है।

इसी प्रकार बाइस्किल के आविष्कार से मनुष्य ने तुल्य-भारता के सिद्धान्त को बिल्कुल पलट दिया। साधारण गति-शास्त्र के नियमों के अनुसार दो पहियों को आमने सामने एक ही ऊर्द्ध धरातल में रख कर यह असम्भव है कि कोई मनुष्य अपने को स्थिति-तुल्य रख सके। अथवा यों कहना चाहिए कि जब तक ये दोनों पहिये चलते न रहें यह बात असम्भव है। जब यह बात सम्भव हो गयी तो बाइस्किल पर चढ़ने वाले किसी भी मनुष्य के लिए तुले रहना बहुत सरल हो जाता है। वास्तव में गति-शून्य मशीन की अपेक्षा गति-पूर्ण मशीन में तुल्य-भार प्राप्त करना और बनाये रखना बहुत सहल है। प्रकृति के इस सिद्धान्त का ज्ञान प्राप्त हो जाने से मनुष्य ने एक ऐसा यंत्र बना लिया है जिसे चक्रगति-वीक्षण यंत्र कहते हैं। इस यंत्र का सिद्धान्त यह है कि अगर ऊर्द्ध तल में घूमने वाली किसी मशीन के ऊपर समतल में घूमने वाले दो भारी पहिये रख दिये जांय तो विरोधी शक्तियों के उपस्थित रहने पर भी यह मशीन तुली रहेगी। इस यंत्र का उपयोग जहाज़ों और हवाई जहाज़ों में ख़ूब होता है। इस सिद्धान्त के प्रयोग करने में अभी हमें पूरी पूरी सफलता प्राप्त नहीं हुई है परन्तु जितनी उन्नति इस समय तक हो पायी है उस के आधार पर हम कह सकते हैं कि वह दिन शीघ्र ही आने वाला है जब मोटरकार और रैलगाड़ी चार पहिये की जगह एक ही पहिये पर अधिक स्थिरता और अधिक तेज़ी से चल सकेंगी। यदि मनुष्य इस आविष्कार में सफल हो

गया तो शक्ति और धन के बहुत कम व्यय से ही इन मशीनों द्वारा वह सब काम लिया जा सकेगा जो आज कल इतना अधिक धन व्यय कर के लिया जा रहा है।

मनुष्य ने प्रकृति और प्रकृति के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त पर हवा में भी विजय प्राप्त करली है। अठारहवीं शताब्दी में इस बात का पता लगा कि कोल-गैस इत्यादि कुछ ऐसी गैसें हैं जो हवा से हलकी हैं और यदि किसी हलके थैले में यह गैसें भर दी जांय तो वह थैला न केवल हवा में तैरता रहेगा परन्तु ऊंचा भी उड़ जायगा। यहीं पर
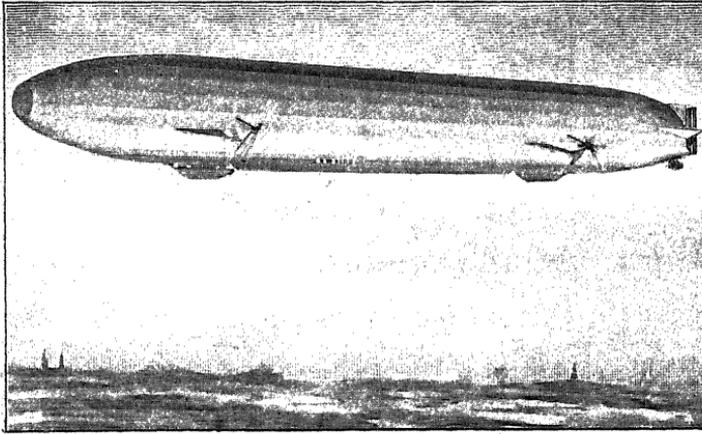
ज़प्लीन

गुब्बारे के आविष्कार का श्रीगणेश समझना चाहिए। हाल में गुब्बारों के बनाने में तथा इन के उड़ाने की कला में इतनी अधिक उन्नति हो गयी है कि अब गुब्बारों द्वारा मनुष्य हवा में उसी प्रकार यात्रा कर सकते हैं जैसे पृथिवी पर रेल में बैठ कर।

गुब्बारा हवा में तैरता रहता है। यह हवा से हल्का होता है और इसी लिए आसानी से उड़ता रहता हैं। परन्तु जिस प्रकार किसी पेड़ का खोखला तना, बांस का डंडा तथा आज कल के जहाज़ों का गुरुत्व पानी से अधिक होते हुए भी वे नहीं डूबते परन्तु पानी पर तैरते रहते हैं उसी प्रकार अब मनुष्य ने एक ऐसी मशीन का आविष्कार किया है जो पक्षियों की भांति हवा से भारी होने पर भी हवा में तैरती रहती है। आज कल के हवाई जहाज़ को ग्लाइडर नाम की मशीन का परिवर्द्धित स्वरूप कहा जाना चाहिए।
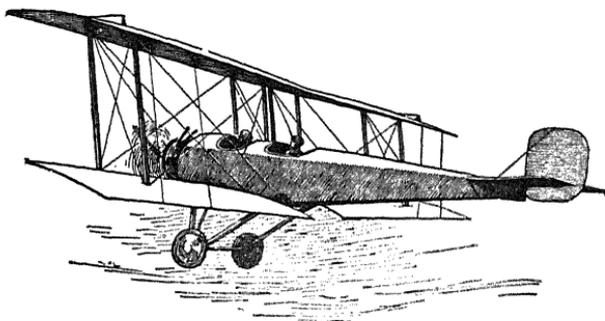
हवाई जहाज़

यह मशीन चिड़ियों के पर अथवा पतंग की सी शक्ल की बनायी जाती है जिस में न कोई ऐंजिन होता है और न ही किसी प्रकार के कल पुर्ज़े बने होते हैं। यह मशीन ऊँचाई पर से चील की भांति एकदम झपट्टा मार कर पृथिवी तक पहुंच जाती है। बाइस्किल की भांति हवाई जहाज़ भी हवा में अपनी गति के कारण स्थिति और उड़ान क़ायम रख सकता है। हवाई जहाज़ों के ऐंजिन मोटरकार के ऐंजिन की तरह होते हैं। भेद केवल इतना ही है कि ये उनसे

बहुत अधिक शक्तिशाली होते हैं। आज दिन उड़ने की कला में ऐसी आश्चर्यजनक उन्नति मनुष्य ने प्राप्त कर ली है जो आज से दो या तीन पीढ़ियां के पूर्व के मनुष्यों के लिए असम्भव और अद्भुत प्रतीत होती थी। जिस प्रकार मनुष्य ने पृथिवी और समुद्र के विस्तार पर अपूर्व विजय प्राप्त की है उसी प्रकार आज दिन उस ने हवा पर भी इतना अधिक आधिपत्य जमा लिया है कि उस पर भी पूर्ण विजय प्राप्त करने में तथा उसकी शक्ति को अपने क़ाबू में लाकर उस के द्वारा अपने अनेकों काम निकालने में उसे अब बहुत देर न लगेगी।

तेरहवां अध्याय

लिखना और छापना—विवेक और बुद्धि पर विजय

अक्षर लिखने और छापने के आविष्कार का वास्तविक अर्थ है विवेक और बुद्धि पर विजय। मनुष्य प्रकृति से सामाजिक जोव है। जिस प्रकार हाथी तथा घोड़े जंगलों में झुंड के झुंड रहना पसन्द करते हैं अथवा शेर और चीते जंगल में अकेले हो रहते हैं और यह उन को प्रकृति कही जाती है उसी प्रकार मनुष्य भी टोली बांध कर रहना पसंद करता है और यही उस की समाजप्रियता है। इस प्रकार टोलियों में रहने के कारण बहुत प्राचोन समय से ही मनुष्यों को एक दूसरे पर अपने विचार प्रदर्शित करने के लिए एक अद्भुत और असाधारण साधन की अवश्यकता प्रतीत हुई होगी। पशु और पक्षियों को अपनी इन्द्रिय सम्बन्धी आवश्यकताओं को एक दूसरे पर प्रदर्शित करने के लिए तरह तरह की बोलियां बोलने की शक्ति प्राप्त है। मनुष्य ने उसी प्रकार अपनी शारीरिक तथा मानसिक आवश्यकताओं को प्रदर्शित करने के लिए एक ऐसे अभूतपूर्व साधन का आविष्कार किया है जिस का वृत्तान्त बड़ा मनोरम तथा रोमाञ्चकारी है। अपनी टोली में जब अपने साथियों के साथ अपने विचार विनिमय में मनुष्य को पूरी पूरी सफलता प्राप्त हो गयी तो उस ने इस से भी अधिक उन्नत एक ऐसे विलक्षण साधन का आविष्कार किया जिस के द्वारा वह अपने इन विचारों को लिपिबद्ध कर देश देशान्तरों के मनुष्यों के साथ ही नहीं परन्तु भविष्य में उत्पन्न होने

वाली संतानों के साथ भी मानसिक और नैतिक सम्बन्ध स्थापित कर सकता है। लेखन-कला के आविष्कार का सूक्ष्म रूप से यही श्रीगणेश है।

आज दिन जो नमूने प्राचीन लिपियों के हमें प्राप्त हुए हैं वह चीन मिश्र और चैल्डिया में मिलते हैं। इन को हम अक्षर तो किसी प्रकार कह ही नहीं सकते। यदि इन्हें संकेत-चित्र कहें तो अधिक उपयुक्त होगा। उदाहरण के लिए मिश्र की प्राचीन लिपि में ∧∧∧ संकेत पानी के लिए है। चीनी लिपि में 人 मनुष्य के लिए है। इसी प्रकार जिस संकेत से रोमन लिपि का A ग्रीक लिपि का £ देवनागरी लिपी का अ तथा तामिल लिपि का அ बने हैं उस का अर्थ घर होता है। कुछ समय बाद इसी प्रकार के चिन्ह चीज़ों अथवा शब्दों के बजाय केवल एक विशेष ध्वनि के लिए प्रयोग होने लगे और इस प्रकार आधुनिक वर्णमालाओं का आविष्कार हुआ। चीन में आज तक मनुष्य के लिए 人 चिन्ह व्यवहार में लाया जाता है लेकिन एक भाषा में इस की ध्वनि होती है 'लाँग' तथा दूसरो में 'जीन'। ग्रीक लोगों का यह विश्वास था कि फ़िनीशियन लोगों ने यूरोप की वर्णमाला का आविष्कार किया था। यह जाति बड़े समृद्धिशाली व्यापारियों की थी जिन्होंने टायर, सिटोन और बाद में कारथेज और मारसेल नगर बसाये। यह धारणा बहुत कुछ सत्य प्रतीत होती हैं कि भूमध्य सागर के पूर्वी देशों से ही लेखन-कला का पश्चिम में प्रादुर्भाव हुआ और आज कल की जर्मन, रूसी, रोमन, देवनागरी, ग्रीक, तामिल और अरबी लिपियां सब इसी एक ही आदि लिपि के भेद प्रभेद प्रतीत होते हैं।

अवश्य ही मनुष्य का सब से पहला लेख पत्थरों पर खुदे हुए चित्र अथवा चिन्ह रहे होंगे। यही कारण है कि परम प्राचीन लिपियों के अक्षर प्रायः सीधी रेखाओं द्वारा बने हैं। इन में घूम अथवा मोड़ बहुत कम है। इस के बाद लेखन कला में नया परिवर्तन हुआ। इस दूसरे युग में चमड़े अथवा भोजपत्र अथवा तालपत्रों पर लोहे की नोकदार क़लम से लिखने की प्रथा प्रचलित हुई। भारतवर्ष में अब भी भोजपत्र पर लिखते हैं। थोड़े समय के पश्चात मिश्र देश का पेपिरस (Papyrus) और अन्य देशों में चिथड़े और छाल द्वारा बनाये हुए आज कलके बही के काग़ज़ अथवा मोमी काग़ज़ बनना प्रारम्भ हो गये। यहां तक कि आज दिन काग़ज़ बनाने के रासायनिक तरीक़े आविष्कृत हो गये हैं। पुराने नर्सल और सरकंडे की क़लम की जगह लोहे के निबदार लकड़ी और धात के ख़ूबसूरत हैंडिल, बन गये हैं। स्लेट और सुरमे की पेन्सिल से लेकर नीली पीली रंग बिरंगी तथा कापी करने और नक़्शा खींचने की पेन्सिलें तैयार हो गयी हैं। और साधारण होल्डर से ले कर स्टायलो और फ़ौन्टेन क़लम और कोयला और कालिख की काली स्याही से लेकर तरह तरह की ब्लयूब्लैक और बड़ा सुन्दर और सहज लिखने वाली स्याहियां बन गयी हैं।

मनुष्य की सभ्यता के विकास के इतिहास में सब से बड़ा युग-प्रवर्तक जो आविष्कार हुआ है वह छापने की कला का आविष्कार है। इस आविष्कार के पूर्व संसार में इतनी अधिक किताबों का बनना सम्भव नहीं था और इसलिए मनुष्यों के विवेक और बुद्धि की ऐसी उन्नति होनी भी सम्भव नहीं थी। हाथ से लिखने में

कितना अधिक समय लगता है आज दिन इस बात का अनुमान कर हम यह कह सकते हैं कि छपाई के आविष्कार से पूर्व किसी भी महत्वपूर्ण ग्रंथ की ६—७ अथवा दस बीस प्रतियों से अधिक प्रतियां होना असम्भव नहीं तो दुष्कर अवश्य था। इस विचार से सन् ३६१ ई० में एलेग्ज़ेण्ड्रिया के ग्रीक पुस्तकालय के जल जाने से मनुष्य जाति का जितना अहित और नुक़सान हुआ है उस का अनुमान लगाना कठिन है। इस पुस्तकालय में बहुत सी पुस्तकें तो ऐसी थीं जिन की प्रतिलिपि संसार में कहीं थी ही नहीं। अस्तु इस पुस्तकालय के जल जाने से मानवी ज्ञान-भंडार की जो क्षति हुई उस का पूरा करना असम्भव है। इसी प्रकार सन् १४५३ ई० में कान्स्टेण्टीनोपिल के वृहत पुस्काकालय के तहस नहस हो जाने से सैकड़ों पुस्तकें सदा के लिए संसार से जाती रहीं। पाश्चात्य विद्वानों को ग्रीक भाषा में लिखी हुई बहुत सी हस्तलिखित पोथियां प्राप्त हुईं परन्तु इन में से कितनी अप्राप्य हो गयीं इस बात का अन्दाज़ा लगाना कठिन है। इसी प्रकार भारतवर्ष में तक्षशिला, नलन्द, और इन्द्रप्रस्थ आदि स्थानों के पुस्तकालयों के नष्ट भ्रष्ट हो जाने के कारण संस्कृत, प्राकृत तथा अन्य भाषाओं के ज्ञान-भाण्डार की जो क्षति हुई है उस का वर्णन नहीं हो सकता। आज कल अगर कोई लेखक अपनी पुस्तक लिखता है तो उस की सैकड़ों और हज़ारों प्रतियां देश देशान्तरों में फैल जाती हैं और सारी मनुष्य जाति को उपलब्द्ध हो सकती हैं।

हमें यह बात निश्चित रूप से नहीं मालूम कि छापने की कला का आविष्कार सब से पहले किस ने किया। परन्तु यह बात

निर्विवाद सत्य है कि चीन में ह सब से पहले पुस्तकें छापना प्रारम्भ हुआ। इस प्रकार की कई कलाओं के चीनवाले अवश्य ही आविष्कार-कर्त्ता हैं परन्तु उन्होंने एकबार ऐसे आविष्कार कर लेने के पश्चात उन में कोई उन्नति नहीं की। चीन के रहनेवालों ने पत्थर का कोयला, बारूद और छापने की कला का आविष्कार पाश्चात्त्य देशों के निवासियों से हज़ारों वर्ष पहले किया। चीनी मट्टी के बर्तन और रेशम के अविष्कारक भी यही लोग हैं। परन्तु शांघाई, पीकेन और कन्टन की गलियों में आज दिन भी वही हाथ के बनाये हुए लकड़ी के छापे, स्याही की छड़ियां तथा घोटकर चिकना किया हुआ लाल काग़ज़ नज़र आवेगा। इस देश में आज दिन भी सारा काम हाथ से उसी प्रकार किया जाता है जैसा कि ७००० वर्ष पहले था। अब तक चीनी लोगों की समझ में यह बात नहीं आयी कि समय बहुमूल्य धन है और जो साधन उन के पूर्वजों के लिए हितकर थे वेही आज दिन भी उन्नत और आधुनिक अवस्था में उन के लिए हितकर हो सकते हैं।

यूरोप में छापने की कला सैकड़ों वर्ष बाद पहुंची परन्तु वहां उस की उन्नति बड़ी तेज़ी से हुई। यूरोप में १५वीं शताब्दी में इस कला का प्रादुर्भाव हुआ। अभी तक निश्चित रूप से हम यह नहीं कह सकते कि सब से पहले किस देश में और किस ने छापाख़ाना बनाया। डच लोगों का कहना है कि सन् १४२६ ई० में उन के देशवासी कौस्टर ने यह आविष्कार किया। जर्मन लोगों का यह दावा है कि सन् १४३८ ई० में गिटनवर्ग के एक जर्मनने इस का आविष्कार किया। सम्भव है कि इन दोनों आविष्कार-कर्त्ताओं ने बिना एक दूसरे के

आविष्कार का हाल जाने हुए अपने अपने देश में यह आविष्कार स्वतंत्र रूप से किया हो।
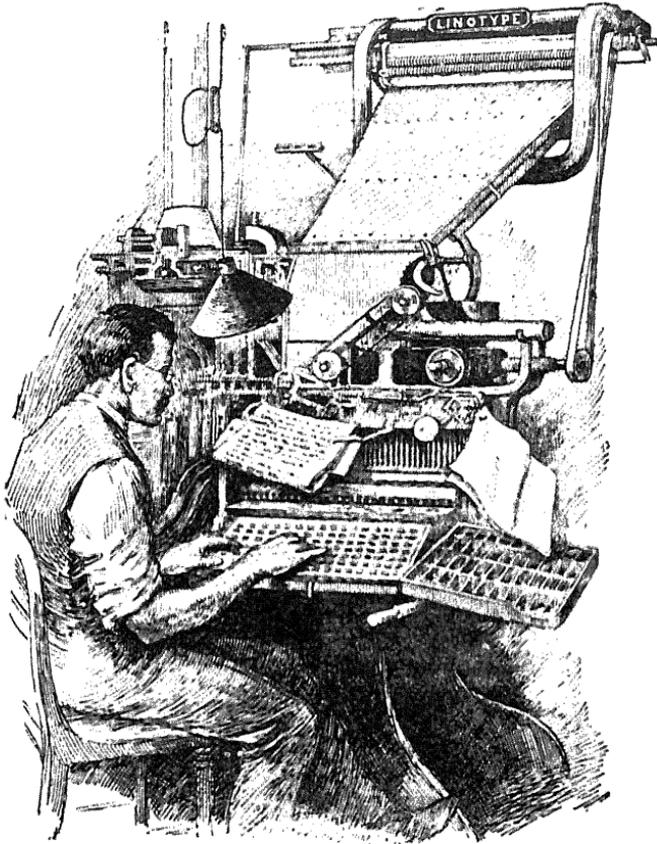
लिनोटाइप मशीन

इस सम्बन्ध में हमें न तो कुछ अधिक हाल विश्वस्त रूप से मालूम ही है और न इस के जानने की अधिक आवश्यकता प्रतीत होती है। १५वीं शताब्दी के अन्त और १६वीं के आदि काल में

हालेण्ड, जर्मनी, इटली और इंग्लैण्ड में छापने की कला का अच्छा ख़ासा प्रचार हो गया था। कैक्सटन नामी अंग्रेज़ उस समय के मुद्रकों में सब से अधिक मशहूर है। उस समय छापे का सारा काम हाथ से किया जाता था और लकड़ी के छापे बनाये जाते थे। इस लिए छापने में समय भी अधिक लगता था और मेहनत भी बहुत पड़ती थी। परन्तु इन सब अड़चनों के रहते हुए भी हाथ की लिखी हुई और इस प्रकार हाथ के छापे से छपी हुई किताबों में फिर भी बहुत अन्तर हो जाया करता था। छापे के आविष्कार से ज्ञान वृद्धि का श्रीगणेश हो चुका था। छापे की कला द्वारा हमारे ज्ञान का परिवर्द्धन, परिवर्तन और संरक्षण होता है। मनुष्य द्वारा किये हुए सारे आविष्कारों का वृत्तान्त जब छप कर पुस्तक के रूप में आ जाता है तो यह ज्ञान मनुष्य की स्थायी सम्पत्ति हो जाता है। कैक्सटन के समय से छापे की कला में अन्य कलाओं की भांति अब ऐसी आश्चर्यजनक उन्नति हो गयी है जिसका अनुमान उस समय के लोगों के स्वप्न में भी आना असम्भव था। आज कल लंडन के दैनिक पत्रों की लाखों प्रतियां कुछ घंटों में कम्पोज़ और तैयार हो कर छप जाती हैं। यह समाचारपत्र देश के कोने कोने में पहुंचते हैं और प्रत्येक पढ़े लिखे मनुष्य को देश विदेशों में क्या हो रहा है इस बात का ज्ञान बहुत थोड़े समय में परन्तु बड़ी उत्तम रीति से हो जाता है। आज दिन इस कला के आविष्कार के प्रभाव से ज्ञान प्राप्त करना संसार में ग़रीब से ग़रीब मनुष्य के अधिकार में आ गया है। सभ्यता और उन्नति के इस युग में अपढ़ रहना दुर्भाग्य नहीं कहा जा सकता वरन् इसे बड़ा भारी जुर्म समझना चाहिए।

चौदहवां अध्याय

मुद्रा का विकास—व्यापारी असुविधाओं पर विजय

हम इस बात का वर्णन कर चुके हैं कि मनुष्य ने अपनी उन्नति के मार्ग में असुविधाओं पर विजय प्राप्त कर सभ्यता ग्रहण करने की चेष्टा की है। इस काम में अपनी शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए असभ्य मांसाहारी और वृक्षों पर पशुओं की भांति जीवन विताने की अवस्था से जिस प्रकार परिवर्तन कर मनुष्य टोली बना कर रहने लगा तथा पशुओं को पाल कर चरवाहों का जीवन बिताने लगा उस में बहुत कुछ उन्नति हुई। इस के बाद खेती बारी का काम कर, भूमि को साफ़ और उपजाऊ बना, गांव बसा कर रहने की बारी आयी। इस अवस्था से गुज़रने में बहुत अधिक समय न लगा और थोड़ी ही शताब्दियों में मनुष्य व्यापार करने लगा। प्रारम्भिक अवस्था में यह व्यापार एक कुटुम्ब का दूसरे कुटुम्ब के साथ तथा एक गांव का दूसरे गांव के साथ होता था। परन्तु सामाजिक जीवन की स्थापना के साथ जब राज्य प्रणाली का प्रादुर्भाव हुआ तो इस व्यापार का क्षेत्र तथा इस का विस्तार बढ़ने लगा। परन्तु जब तक मनुष्य ने मुद्रा का आविष्कार न कर लिया व्यापार अपना वास्तविक, व्यवहारिक और व्यापक रूप प्राप्त न कर सका। इस परिवर्तन को भली भांति समझने के लिए इस बात के जानने की आवश्यकता है कि मुद्रा क्या चीज़ है।

इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए हम एक दृष्टान्त उपस्थित करते हैं। विचार कीजिये कि किसी गांव में एक किसान को जिस के

यहां जौ की खेती होती है एक नये हल की आवश्यकता है। यह किसान एक गाड़ी में जौ भरवा कर पास ही दूसरे गांव में रहने वाले लोहार के यहां पहुंचता है और अपने माल के बदले में उस से हल देने की प्रार्थना करता है। किसान गाड़ी भर कर जौ ले जाता है और उस का नाज बहुत अच्छा है तौ भी लोहार को जौ की आवश्यकता न होने के कारण वह किसान को यह कह कर लौटा देता है कि मुझे तो अपने हल के बदले में गेहूं चाहिए। अब बेचारे किसान के लिए जौ से भरी हुई गाड़ी लिये हुए जगह जगह इस फ़िकिर में फिरना कि उस के जौ के बदले में गेहूं मिल जाते तो वह अपनी आवश्यकता पूरी करता, बड़ा असुविधाजनक और हास्यस्पद सा व्यवहार मालूम होता है।

यह दृष्टान्त आज कल तो अवश्य कल्पित मालूम होता है परन्तु हमारे देश के गांवों में अब भी नाज के बदले तरकारी तथा अन्य वस्तुएं बिकती हुई देखने को मिल सकती हैं। और २०,२५ वर्ष पहले तो बहुत सा व्यापार गांवों और छोटे छोटे क़सबों में इसी प्रकार बदले का होता था। हमारे गांवोंको पैठ में अब भी लोग वह सौदा लेकर उपस्थित होते हैं जो उन के पास अपनी आवश्यकता से अधिक होता है और उस के बदले में उन चीज़ों को घर ले जाते हैं जिन की उन्हें आवश्यकता होती है। इस प्रकार अपनी आवश्यकता से अधिक चीज़ों को इस लिए इधर उधर लिये फिरना कि उन के बदले में अपनी आवश्यकता की चीज़ें प्राप्त कर लें बड़ा भद्दा और असुविधाजनक तथा अव्यवहारिक व्यापार मालूम होता है।

अगर हम यह कल्पना करें कि मुद्रा का व्यवहार स्थापित नहीं हो पाया है और लोग तरह तरह की वस्तुएं लिये हुए डाकख़ाने के दरवाज़े पर इस लिए खड़े हैं कि वे टिकट ख़रीद कर अपनी चिट्ठियां भेज दें तो बेचारे डाकबाबू का तो बुरा हाल हो जाय। इन सब वस्तुओं को रखने के लिए जगह चाहिए और सब से अधिक चाहिए यह बात कि डाकबाबू को उन सब चीज़ों के लेने में सुविधा हो। हमारे विचार में अब तो इस प्रकार की परिस्थित देव और परियों की कहानियों वाली किताबों में ही पढ़ने को मिल सकती है। अस्तु इस प्रकार के व्यापार की अड़चन और असुविधा मनुष्य समाज में बहुत अधिक समय तक जारी रहनी सम्भव नहीं थी और इस लिए किसी एक ऐसी वस्तु की आवश्यकता प्रतीत होने लगी जिस के बदले में हर एक चीज़ मिल सके तथा जो अकेली हर प्रकार की दूसरी चीज़ों को ख़रीद सके।

इसी वस्तु का नाम मुद्रा है। किसान गाड़ी भर जौ बेच कर मुद्रा प्राप्त करता है और उस मुद्रा से लोहार के पास जा कर हल ख़रीद लेता है। लोहार उसी मुद्रा से अपनी आवश्यकता की कोई भी चीज़ किसी भी व्यापारी से ख़रीद सकता है। अस्तु वही मुद्रा चाहे उस का नाम पौण्ड रखा जाय चाहे डालर चाहे रुपया हाथों हाथ फिरता रहता है और उस के द्वारा उस प्रत्येक आदमी को (जिस के पास वह होता है) अपनी आवश्यकता की प्रत्येक वस्तु प्राप्त हो सकती है।

मुद्रा का जो वर्णन हम ने ऊपर दिया है उस से कुछ लोगों को यह भ्रम हो सकता है कि मुद्रा संसार में सब से बहुमूल्य पदार्थ है परन्तु वास्तव में बात कुछ और ही है। मुद्रा का कुछ भी मूल्य
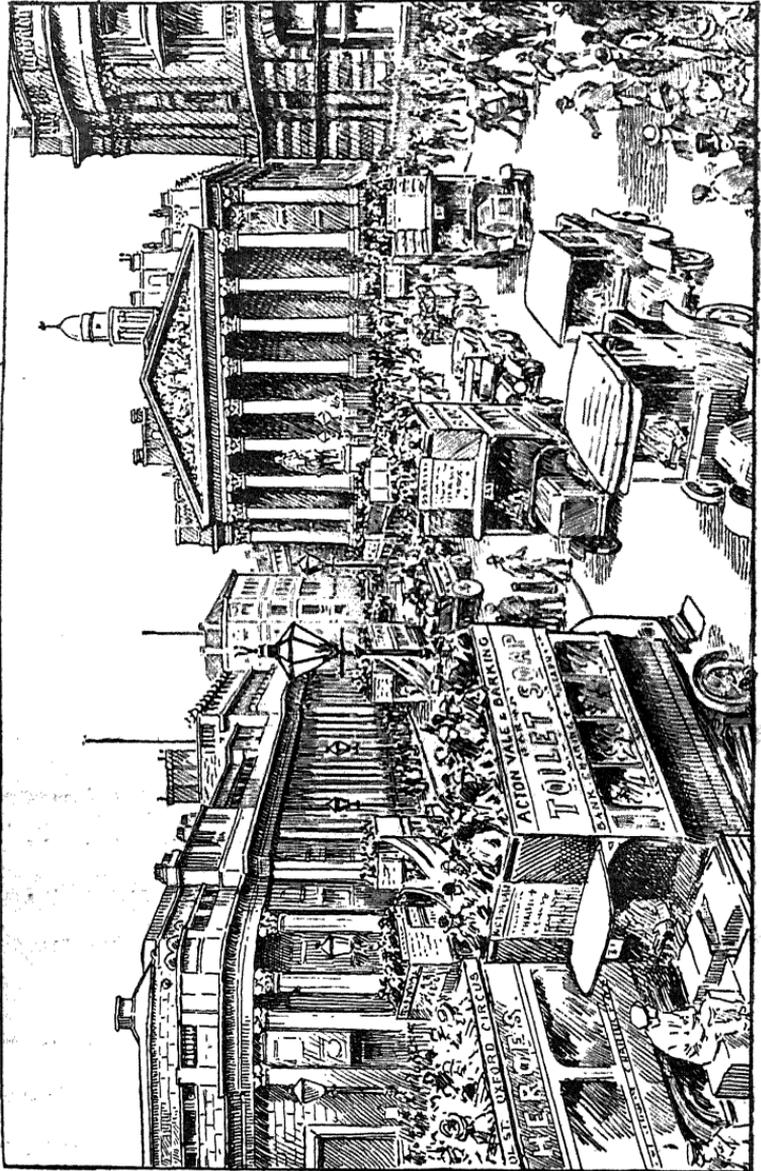
(१) इंगलैण्ड की बैंक

(२) रायल एक्सचेंज

नहीं है। अगर कोई मनुष्य जो जहाज़ पर बैठ कर दूर देशों की यात्रा कर रहा हो तूफ़ान आने के कारण जहाज़ के नष्ट भ्रष्ट हो जाने से किसी ऐसे सुनसान टापू में जा पहुंचे जहां मनुष्य का निशान भी न हो तो उस के पास लाखों रुपये रहते हुए भी उन रुपयों की कोई उपयोगिता नहीं है। क्योंकि उन के द्वारा कोई वस्तु ख़रीदी नहीं जा सकती। यदि भोजन न मिलने के कारण वह भूक से छटपटा रहा हो तो एक मुट्ठी भर चने के बदले वह सैकड़ों रुपये देने को तैयार हो जायगा। वास्तव में मुद्रा का मूल्य इस कारण से है कि यह जिस मनुष्य के पास हो वह इस के बदले में किसी भी ऐसी चीज़ को प्राप्त कर सकता है जिस की उसे आवश्यकता हो। अगर यह सम्भव होता कि जौ देकर ही कोई मनुष्य संसार को किसी भी आवश्यक वस्तु को ख़रीद सकता तो जौ ही मुद्रा का काम देने लगता। हां यह असुविधा अवश्य होती कि जौ के बोरे या बोरियां लिये लिये इधर उधर फिरना पड़ता।

जब हम रेल पर यात्रा करने के लिए प्रयाग से लखनऊ का टिकट ख़रीदते हैं तो उस टिकट का दाम दे कर हम केवल उस काग़ज़ के टुकड़े को ही नहीं ख़रीदते वरन् हम टिकट का दाम इस लिए देते हैं कि रेल में बैठ कर लखनऊ तक की यात्रा कर सकें। टिकट तो केवल इस लिए है कि उसे देख कर टिकट कलेक्टर यह जान ले कि जिस जगह तक यात्रा करनी है उस स्थान का किराया दे दिया गया है। इसी प्रकार १०) के नोट को भी एक तरह का टिकट समझिये। असल में तो वह काग़ज़ का एक पुरज़ा ही है। उस का मूल्य इस लिए है कि जिस किसी के पास १०) का नोट हो वह

कहीं भी जाकर उस नोट द्वारा १०) की क़ीमत तक कोई भी वस्तु ख़रीद सकता है।

अब हम अपने पाठकों को यह बतलाना चाहते हैं कि मुद्रा का मूल्य हम लोगों का निर्धारित किया हुआ है। रोटी का मूल्य वास्तविक है क्योंकि हम उसे खाते हैं। कोट का मूल्य वास्तविक है क्योंकि उसे हम पहनते हैं। एक मन कोयले का मूल्य भी वास्तविक है क्योंकि उसे जला कर हम भोजन पकाते हैं तथा अन्य काम ले सकते हैं। परन्तु दस रुपये के नोट का कोई वास्तविक मूल्य नहीं है क्योंकि न हम उसे खा सकते हैं न पहिन सकते हैं और न किसी अन्य प्रकार से उपयोग में ला सकते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार सोने की मुहर का भी कुछ अधिक मूल्य नहीं है क्योंकि हमारे लिए उस की उपयोगिता केवल इसी बात में है कि हम उसके आभूषण बनवा कर पहिन लें। अस्तु हम कह सकते हैं कि किसी वस्तु का वास्तविक मूल्य उस की व्यवहारिक उपयोगिता पर निर्भर होता है।

इस तर्क से यह सिद्ध हुआ कि मुद्रा का मूल्य केवल उस का चलन-व्यवहार मूल्य है। या मुद्रा केवल इस अंश में मूल्यवान है कि उस के बदले कोई भी उपयोगी चीज़ मिल सकती है। हमारे देश में सोने, चांदी, निकिल, तांबा और काग़ज़ की मुद्राओं का व्यवहार होता है। प्रायः सभी सभ्य देशों की मुद्रायें इन्हीं वस्तुओं से बनती हैं। परन्तु इस सिद्धान्त के अनुसार कि मुद्रा का मूल्य केवल उस के व्यवहार में है हम किसी भी चीज़ को मुद्रा मान सकते हैं। संसार के इतिहास में समय समय पर कांसा, लोहा, चमड़ा और कौड़ी भी मुद्रा के रूप में व्यवहार में आयी हैं। लका द्वीप में अब भी

कौड़ियों का चलन है और गवर्नमेण्ट का टैक्स भो कौड़ियों में ही दिया जाता है। वैदिक काल में हमारे देश में गऊ धन समझो जातो थी। जिस के पास जितनी अधिक गौएं होती थीं वह उतना ही अधिक धनी समझा जाता था। हमारे देश में अब तक गऊ दान ही श्रेष्ठ दान समझा जाता है। इस का अर्थ यही है कि उस समय की सभ्यता के अनुसार गऊ सब से उत्तम प्रकार का धन मानी जातो थी। अब तो किसी भी चीज़ को मुद्रा का रूप दिया जा सकता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि राज्य की ओर से क़ानून द्वारा यह निश्चित कर दिया जाय कि वह वस्तु प्रत्येक वस्तु ख़रीदने में स्वीकृत होगी और उस के द्वारा हर प्रकार का ऋण चुकाया जा सकेगा।

अगर कोई लड़का अपने सहपाठी से अपनी पुस्तक देकर उस का चाकू ले ले तो इस प्रकार के व्यापार को हम विनिमय व्यापार कहते हैं। हम ऊपर बतला चुके हैं कि इस प्रकार का विनिमय संसार में मुद्रा के चलन के पहले जारी था और हमारे देश के गांवों में अब भी जारी है। गांवों में नाज के बदले तरकारी, सुई, पेचक तथा कपड़ा तक लिया जा सकता है और धोबी, नाई दरज़ी तथा अन्य पेशेवालों की मज़दूरी भी नाज दे कर चुकायी जाती है। परन्तु सभ्यता के विकास में जब हमारे इस विनिमय की मांग बढ़ी और विनिमय द्वारा प्राप्त होने वाली चीज़ों की संख्या भी बहुत अधिक हो गयी तो विनिमय व्यापार बड़ा असुविधाजनक और असंगत सा मालूम होने लगा। अब मनुष्यों को इस बात की आवश्यकता हुई कि इस विनिमय का कोई ऐसा एक माध्यम निर्द्धारित किया जाय जिसके

द्वारा किसी स्थान पर किसो समय तथा किसी भी अवस्था में कोई चोज़ प्राप्त हो सके। विनिमय के इस माध्यम का एक आवश्यक गुण यह भी होना चाहिए था कि वह ऐसी वस्तु हो जो हल्की हो बहुत बड़ो भी न हो, आकर्षक और सुबोध हो तथा जिसको ले जाने में भो किसी प्रकार की असुविधा न हो। इस परिभाषा के अनुसार क़ीमती धातुओं के टुकड़ों का व्यवहार मुद्रा के रूप में होने लगा और यही मुद्रा के जन्म का इतिहास है।

मुद्रा के आविष्कार से प्रकृति पर किसी प्रकार की विजय प्राप्त नहीं हुई। विनिमय व्यापार की असुविधाओं पर यह अवश्य ही बड़ी युग-प्रवर्तक विजय है। विनिमय के युग में एक चीज़ के बदले दूसरी चीज़ प्राप्त करना इतना अधिक असुविधाजनक हो गया था कि मुद्रा का आविष्कार इस असुविधा का स्वाभाविक प्रतिकार कहा जा सकता है। मुद्रा के आविष्कार द्वारा अब क्रय-विक्रय और लेन-देन का विस्तार बहुत बढ़ गया है। मुद्रा ही वाणिज्य व्यापार की जन्म-दाता तथा आधुनिक व्यापार के विस्तार का मुख्य साधन है। यही आधुनिक नागरिक सभ्यता की जन्मदाता तथा प्रसारक है।

पन्द्रहवां अध्याय

राज्यसत्ता—सामाजिक असुविधाओं पर विजय

मानव सभ्यता के इतिहास के प्रारम्भिक युग में मनुष्य छोटी छोटी टोलियां बना कर रहते थे। इनके रहने का कोई स्थान निश्चित नहीं था और ये छोटे छोटे कुटुम्ब जल, चारा तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं की सुविधा के अनुसार एक स्थान से दूसरे स्थान की तरफ़ अपने बालबच्चों तथा गोरुओं इत्यादि के साथ फिरते रहते थे। अपने जीवन निर्वाह के लिए उस युग में मनुष्यों का सब से बड़ा सहारा शिकार खेलने का कौशल तथा पालतू जानवरों के दूध, मांस तथा खाल आदि पर निर्भर था। उस युग के मनुष्य को अपने पशुओं को चराने तथा उनकी रक्षा करने के दोनों ही काम करने पड़ते थे। इस के सिवाय उस युग के मनुष्यों का काम केवल संग्रह करने का था। जंगलों तथा नदियों के किनारे से कन्द मूल फल तथा मांस इकट्ठा कर के लाना और उसके द्वारा अपना तथा अपने कुटुम्ब का निर्वाह करना यही उस समय के मनुष्यों का प्रधान कर्तव्य था।

आज कल भी उत्तरी ध्रुव-प्रदेशों के रहने वाले एस्क्युमो लोग सभ्यता की इसी 'संग्रह करने वाली' अवस्था में रह रहे हैं। ये लोग कुछ भी पैदा नहीं करते। सील, वालरस तथा भूरे भालू इत्यादि को पकड़ना और उनका शिकार करना मात्र ही इनका काम है। इन जानवरों के मांस से इन्हें आहार मिलता है और चरबी जलाकर ईंधन तथा प्रकाश का काम लेते हैं। इन की खाल तथा रोंओं के

कपड़े बनाते हैं और इनके दांत तथा हड्डियों से कंघे, छुरे, प्याले इत्यादि का काम लेते हैं। आज कल यूरोपियन देशों से जहाज़ों के आने जाने के कारण इन लोगों को स्पात के छुरे तथा कुछ और ऐसी ही आवश्यक वस्तुएं मिल जाती हैं। परन्तु फिर भी ये लोग अपनी उसी आदिम अवस्था में रहना पसन्द करते हैं और इन जानवरों के शिकार में समय विताना ही अपने जीवन का सब से बड़ा कर्तव्य समझते हैं। अपने कपड़े, जूते तथा नाव इत्यादि बनाने के लिए अब ये लोग इन जानवरों के चमड़े को साफ़ करके पकाने लग गये हैं। झाँवे के रोड़ों से ये लोग भोजन पकाने के बर्तन तथा चिराग़ बना लेते हैं और हड्डियों से सुइयां, प्याले तथा तशतरियां इत्यादि बना डालते हैं।

सभ्यता की यह अवस्था जिस में मनुष्य केवल संग्रह करना ही अपना कर्तव्य समझते हैं बड़ी निकृष्ट अवस्था है। क्योंकि इस अवस्था में मनुष्यों का रहन सहन बिल्कुल निःसार होता है। इस प्रकार का रहन सहन उत्पादन तथा लाभ की दृष्टि से भी निश्फल ही कहा जाना चाहिए। क्योंकि इन मनुष्यों के द्वारा कोई ऐसा कार्य सम्पादित नहीं होता जिस से अन्य लोगों का लाभ हो तथा उन्हें किसी प्रकार की सहायता अथवा सुविधा मिले। जब कोई भी जाति इस प्रकार का अनुपयोगी जीवन व्यतीत करने में ही अपनी सभ्यता का सर्वस्व समझ बैठती है तो उसका विनाश होने में देर नहीं लगती। यही कारण है कि तस्मानिया के आदिम निवासी उत्तरी अमेरिका की आदिम इंडियन जातियां तथा हमारे देश में नीलगिरी आदि पहाड़ों में रहनेवाली टोड, कोल, और भील जातियों का दिन पर दिन ह्रास

होता चला जा रहा है। और वह समय कुछ अधिक दूर नहीं है जब इन जातियों का नाम निशान तक इस संसार से मिट जायगा और केवल पुराने इतिहास के पृष्ठों में ही उनका वर्णन मिल सकेगा।

संसार में कुछ जातियां अब भी मौजूद हैं जो सभ्यता की इस संग्राहक अवस्था से तो अवश्य आगे बढ़ गयी हैं परन्तु फिर भी वाणिज्य व्यापार और मुद्रा के बिना आदिम कालीन मनुष्यों की तरह उसी पूर्व-ऐतिहासिक अवस्था में रह रही हैं। उनको जीवन निर्वाह के लिए बहुत थोड़ी वस्तुओं तथा सुख सामग्रियों की आवश्यकता होती है। इन्हें वे प्रायः अपने ही परिश्रम द्वारा संग्रह कर लेने में सफल होते हैं। हम अपने इस विचार को यूरोप जैसे सभ्य देश में स्विट्ज़रलैण्ड के निवासियों के दृष्टान्त से पुष्ट करेंगे।

स्विटज़रलैण्ड को प्रायः 'होटलवालों का प्रदेश' कहते हैं। इस देश की पहाड़ियां, वन उपवन और अन्य प्राकृतिक दृश्यों के देखने तथा यहां की आरोग्यपूर्ण और स्वस्थकर जलवायु सेवन करने के लिए यहां के शहरों और गाँवों मे यूरोप तथा अन्य देशों के यात्रियों का मेला लगा रहता है। इस देश में छोटे छोटे गांव भी अधिक हैं और इन गांवों के रहनेवालों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए प्रायः हर एक सामग्री अपने गाँवों में ही प्राप्त हो जाती है। इसलिए ये लोग प्रायः बाहरी दुनिया से बिल्कुल अलग रहते हैं और इनका संसार की अन्य सभ्य जातियों की सभ्यता और उन्नति सम्बन्धी कार्यों से न तो कोई वास्तविक सम्बन्ध ही रहता है और न कोई सम्पर्क ही। इसी देश की ऐनीवियर्स की घाटी (Vald' Anniviers) के रहने वाले मनुष्यों की जीवन प्रणाली

हमारे इस वर्णन का साक्षात प्रमाण है। इस घाटी में होकर आर (Aar River) नदी बहती है। इसके किनारे किनारे बड़े सुन्दर और हरे भरे खेत और बग़ीचे लगे हुए हैं। यहीं पर पहाड़ों की घाटियों में जंगलों से काट कर लकड़ी के शहतीरों द्वारा यहां के निवासियों ने छोटे छोटे तथा बड़े मनोरम लकड़ी के मकान, खलियान
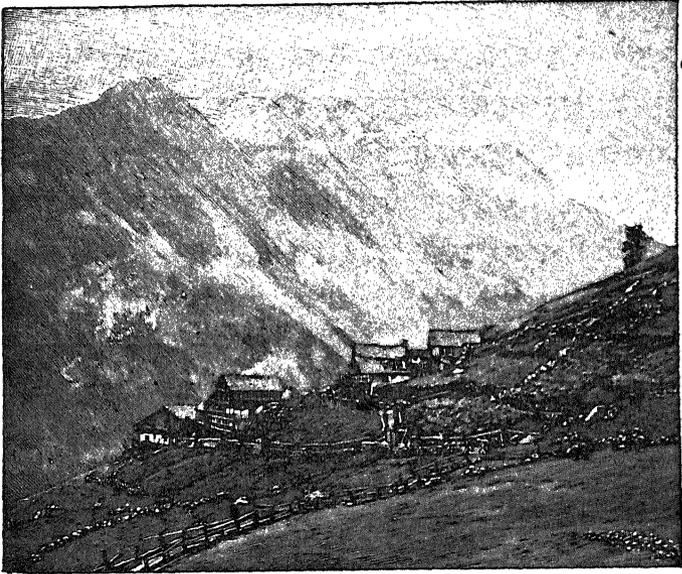
स्विट्ज़लैंड का गांव

इत्यादि बना लिये हैं। इन्हीं जंगलों की लकड़ियों से इन लोगों ने नित्य के काम में आने वाली कुरसी, मेज़ इत्यादि बना डाली हैं और इन्हीं जंगलों की लकड़ियों से ये लोग ईंधन का काम लेते हैं।

इस घाटी में यहां के निवासी अपने खाने के लिए अनाज और तरकारियां तथा अपने जानवरों के लिए चारे की फ़सल उगा लेते हैं।

प्रत्येक गांव में रहने वाला प्रत्येक कुटुम्ब अपने गांव की चक्की पर नाज ले जाकर स्वयं पीस लेता है और अपना आटा ले आता है। हर कुटुम्ब में भेड़ और बकरियां रहती हैं जिन की ऊन और बालों को स्त्रियां कात लेती हैं और मनुष्यों और लड़कों की सहायता से बुन कर कपड़े बना लेती हैं। इन्हीं कपड़ों से प्रत्येक कुटुम्ब का पालन होता है। स्त्रियां नरसल और घास को पीट कर चटाई की टोपियां बिन डालती हैं। वसंत ऋतु आने पर गांव के निवासी आल्प्स पहाड़ को ऊंची घाटियों में अपनी गौओं को चरने के लिए छोड़ देते हैं क्योंकि इन ऊंचे स्थानों में चारा बहुत दिनों तक मिल सकता है। प्रत्येक कुटुम्ब की गायें उसकी अपनी गोचर-भूमि में चरती रहती हैं। इन गायों के साथ ही बकरियां और सुअर भी चरने को चले जाते हैं। गायों के दूध से मक्खन और दही निकालने के पश्चात् जो छाछ बच रहती है उसे खिला कर सुअरों को मोटा चरबीदार बना दिया जाता है। बकरियां बड़ी ऊंची ऊंची पहाड़ियों पर चढ़ कर जा सकती हैं। इसलिए जब गायों को चारा नहीं मिलता तब भी इन बकरियों के चारे की अधिक फ़िकिर नहीं करनी पड़ती। इन बकरियों के दूध से भी मक्खन और पनीर बनाया जाता है।

एनीवियर लोगों के गांव जिस घाटी में बसे हुए हैं वहां सरदी इतनी अधिक होती है कि अंगूर की बेल तथा अन्य फलदार वृक्षों के बग़ीचे लगाना बहुत कठिन है। इसलिए कुछ नीचे उतर कर रोन दरिया की खुली हुई घाटियों में अंगूर की बेल तथा फलदार वृक्षों के बग़ीचे लगाये गये हैं। ये लोग चाय, काफ़ी, बियर, ह्विस्की

इत्यादि नहीं पीते। ये लोग ख़ालिस अंगूरी शराब पीते हैं और इसीलिए इन लोगों ने रोन नदी की घाटी में मीलों तक अंगूर की बेल के बग़ीचे लगा रक्खे हैं। गर्मी के दिनों में लोग इन बग़ीचों की रखवाली करने के लिए नीचे उतर आते हैं। वसंत ऋतु में ये लोग नाज की फ़सल काटने के लिए ऊपर की घाटियों में पहुँच जाते हैं। ये लोग अपने ही बग़ीचे के अंगूरों की शराब बना कर पीपों में भर कर रख लेते हैं। स्त्रियां फलों का मुरब्बा बना लेती हैं। जब जाड़े की ऋतु आती है तो आल्प्स की घाटियों में ख़ूब तूफ़ान आते हैं और बर्फ़ की वर्षा होने लगती है। इस समय ये लोग अपने घरों में बड़ी निश्चिन्तता से बैठे हुए मक्खन, पनीर, फलों के मुरब्बे तथा सुरक्षित मांस का भोजन करते हैं। इन के खेतों में पके हुए और इन के गांव की चक्की द्वारा पीसे हुए गेहूं की रोटी इन्हें खाने को मिलती है और अपने ही बग़ीचे के अंगूरों की शराब ये पीते हैं। अपनी भेड़ों की ऊन के वस्त्र उन्हें शीत से बचाते हैं और अपने गांवों के आस पास के जंगलों से अपने ही हाथ से काटी हुई लकड़ियां जला कर ये अपने घर को गरम रखते हैं।

इस प्रकार जीवन निर्वाह करने के लिए इस जाति के मनुष्यों को केवल शारीरिक परिश्रम के सिवाय और कुछ भी व्यय नहीं करना पड़ता। जब कभी जाड़े के दिनों में अपने गोरुओं का चारा चुक जाने के कारण इन्हें आस पास के पड़ोसियों से कुछ ख़रीदना पड़ता है तो इन्हें बड़ी लज्जा मालूम होती है। इस जाति के प्रत्येक मनुष्य की यह इच्छा रहती है कि अपने कुटुम्ब की प्रत्येक शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए उसे स्वयं यत्नशील होना चाहिए।

यह उदाहरण हम ने एक ऐसी जाति का दिया है जो अपनी प्रत्येक आवश्यकता स्वयं अपने परिश्रम द्वारा पूरी कर लेती है और जिसे इस सम्बन्ध में हम समर्थ अथवा पूर्ण रूप से स्वतंत्र कह सकते हैं। इस जाति के लोग किसी भी बाहर वाले की किसी प्रकार की सहायता के आपेक्षित नहीं हैं। इन्हें बहुत कम वस्तुएं ख़रीदनी पड़ती हैं और उस से भी कम बेचनी। इन के पास रुपया बहुत थोड़ा है क्योंकि इन्हें इस की कुछ आवश्यकता नहीं प्रतीत होती। सम्भव है कि कुछ लोग इस प्रकार के स्वतंत्र समर्थ जीवन को बहुत श्रेष्ठ समझें परन्तु इन एनीवियर्ड जाति के लोगों तथा स्विट्ज़रलैण्ड के प्रायः सभी निवासियों के सम्बन्ध में हम यह कह सकते हैं कि सैकड़ों बरसों से इस देश में रहते हुए भी अन्य देशवासियों को इन के सम्बन्ध का बहुत कम ज्ञान है। इस का कारण यह है कि अन्य देश के लोगों ने इन का कुछ हाल सुना ही नहीं। इन के देश में कोई प्रतिष्ठित महापुरुष अब तक उत्पन्न नहीं हुआ। न इन की भाषा में कोई युगप्रवर्तक पुस्तक मौजूद है और न हो इस देश के किसी निवासी को वैज्ञानिक क्षेत्र में किसी प्रकार के किसी आविष्कार करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। साहित्य और विज्ञान की दृष्टि में ये लोग अन्य जंगली जातियों के आदिम निवासियों से कुछ बहुत अच्छे नहीं हैं। ये लोग प्रायः मूर्ख होते हैं और इनकी कहीं प्रतिष्ठा या मान नहीं होता। इस लिए हम यह कह सकते हैं कि इस प्रकार की जातियों द्वारा संसार में ऐसी किसी चमत्कारपूर्ण उन्नति का होना सम्भव नहीं है जिसे युगप्रवर्तक अथवा संसार की सभ्यता के इतिहास में रोमाञ्चकारी

कहा जा सके। अगर किसी दिन प्रकृति के प्रकोप से इन पहाड़ी प्रदेशों में तूफ़ान या भूचाल के आ जाने से कोई ऐसी दुर्घटना उपस्थित हो जाय जिस से यह देश नष्ट भ्रष्ट हो कर यहां के निवासियों का विनाश हो जाय तो संसार के अन्य देशवासियों को इस समाचार से कौतूहल के सिवाय और कोई हानि नहीं होगी।

जिस प्रकार के जीवन का वर्णन हम ऊपर कर आये हैं आदिम कालीन पुरुष प्रायः इसी अवस्था में रहा करते थे। एस्क्युमो या टोडों की भांति ये लोग भी अपने परिश्रम द्वारा अपनी हर प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति कर लेने में प्रायः समर्थ थे और इस विचार के अनुसार इन में उत्पादकता का अभाव था। जब मनुष्यों के एक कुल ने दूसरे कुल के साथ सम्बन्ध स्थापित किया और उन का व्यवहार बढ़ते बढ़ते व्यापार के रूप में परिणत हो गया तथा जब मनुष्यों ने इस बात का अनुभव किया कि वे एक दूसरे से बिल्कुल स्वतंत्र हो कर नहीं रह सकते हैं तभी मनुष्य जाति की वास्तविक उन्नति का युग प्रारम्भ हुआ। जब मनुष्य का सम्पर्क एक दूसरे के साथ अधिक होने लगा तो उसे इस बात के अनुभव करने में देर नहीं लगी कि वह अकेला बिना दूसरों की सहायता के अपनी हर प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति कर लेने में असमर्थ है। एक ही मनुष्य एक ही समय में दर्ज़ी, चमार, तथा खेत खलिहान का काम करने में असमर्थ था और अब भी है। थोड़े दिनों के अभ्यास के बाद उसे यह बात मालूम हो गयी कि कुछ विशेष मनुष्य किसी विशेष कार्य करने के लिए विशेष रूप से उपयुक्त होते हैं। और यदि इस प्रकार के लोगों को उन के रुचिकर कार्य करने का सुअवसर दिया जाता है

तो थोड़े ही समय में वे उस के विशेषज्ञ हो जाते हैं और उन के इस ज्ञान और निपुणता से सारा समाज लाभ उठ सकता है। प्रसिद्ध ग्रीक दार्शनिक प्लेटो ने आदर्श राज्य का वर्णन करते हुए लिखा है कि ऐसे राज्य में अगर प्रत्येक मनुष्य अपनी योग्यता और अपनी प्रकृति के अनुसार कार्य करने के लिए स्वतंत्र कर दिया जाय तो उस राज्य को ही नहीं वरन् समस्त सभ्य संसार को इस व्यवस्था से यथेष्ट लाभ हो। पूर्व-ऐतिहासिक काल में प्रत्येक मनुष्य अपने तथा अपने परिवार का पालन करने का उद्योग करता रहता था। परन्तु 'लौह युग' के समय से श्रम-विभाग का श्रीगणेश हुआ। जब मनुष्यों को धातुओं की आवश्यकता हुई तो उन्होंने उन लोगों के लिए खाना, कपड़ा और मकान बना देने का प्रबन्ध करना शुरू कर दिया जो उन के लिए खानों में खुदाई कर के धातु निकालते थे तथा जो उन्हें गला कर साफ़ करते और हथियार इत्यादि बनाते थे। संसार में सभ्यता और उन्नति के विकास के साथ यह श्रम-विभाग नित्यप्रति बढ़ता चला जाता है। आज कल हमारा जीवन इतना विषम हो गया है कि हमारी प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति के लिए सैकड़ों प्रकार के उद्योग धंधे तथा उन में काम करने वाले सैकड़ों प्रकार के मनुष्य उपस्थित हो गये हैं।

सभ्यता के विकास के इस संक्षिप्त विवरण से हम इस आशय पर पहुँचते हैं कि किसी भी सभ्य जाति के प्रत्येक पुरुष का प्रत्येक कार्य उस की अपनी तथा अपनी समस्त जाति के हितसाधन में सम्पादित होता है। यह अवश्य है कि कुछ कार्य ऐसे हैं जो अन्य कार्यों से अधिक आवश्यक हैं। परन्तु प्रत्येक उत्पादक कार्य की

उपयोगिता स्वयंसिद्ध है और ऐसे प्रत्येक कार्य का स्थान भी निश्चित है। ऐसो अवस्था में प्रत्येक मनुष्य का कार्य सभ्यता के विकास में आवश्यक ही नहीं परन्तु नितान्त आपेक्षित है। जिस प्रकार किसो मशीन का कोई एक पुरज़ा अन्य दूसरे पुरज़ों से अधिक आवश्यक और उपयोगो हाता है परन्तु उस पुरज़े की उपयोगिता इस बात पर निर्भर है कि वह मशीन का एक आवश्यक अंग हो इसी भांति किसो भी जाति का कोई भी व्यक्ति अन्य दूसरे व्यक्तियों से अधिक उपयोगो उसी अवस्था में हो सकता है जब वह उस जाति का आवश्यक और उपयोगी अंग हो जाय।

उपसंहार

हम ने इस छोटी सी पुस्तक में संक्षिप्त रूप से इस बात के बतलाने की चेष्टा की है कि मनुष्य ने प्रकृति पर किस प्रकार और किस अंश तक विजय प्राप्त करली है तथा इस विजय प्राप्ति में उस की बुद्धि का कितना अधिक उपयोग हुआ है। जिस प्रकार उन्नति शब्द की पूर्ण रूप से व्याख्या करना बहुत कठिन ही नहीं वरन् असम्भव सा है उसी प्रकार यह बतला देना बहुत कठिन है कि प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का क्या वास्तविक मूल्य है। हम आज के दिन अपने उन पूर्वजों से कितने अधिक उन्नत हैं जिन्हों ने ऋगवेद के मन्त्रों को अपनी संतान को कंठस्थ करना सिखाया था तथा उन ग्रीक और ईरानियों से कितने अधिक सभ्य हो गये हैं जिन के युद्ध की चर्चा से अब तक इतिहास के पृष्ठ रंगे हुए हैं। इस बात का ठीक ठीक अनुमान कर लेना बड़ा कौतूहलपूर्ण है।

पाञ्चभौतिक सुख समृद्धि तथा सांसारिक उन्नति ही मनुष्य का सर्व श्रेष्ट ध्येय नहीं हो सकता। वास्तविक सुख, समृद्धि और उन्नति का आभास तो इस बात में है कि मनुष्य अपने उद्देश्य का अनुभव करता हुआ मनुष्यत्व प्राप्त करने की चेष्टा करे। अथवा यों कहा जाय कि मनुष्य की वास्तविक उन्नति इस बात में है कि वह अपने आत्म स्वरूप को पहचाने और आत्मसिद्धि प्राप्त करे। जिस बुद्धि के तेज और बल से उसने अन्य प्राणियों की अपेक्षा अपने आप को सर्वश्रेष्ठ स्थापित कर रक्खा है उसी बुद्धि के बल से यह

आत्मसिद्धि प्राप्त होना भी बहुत कठिन नहीं है। यदि मनुष्य यह चाहता है कि वह अपनी सर्वश्रेष्ठता बनाये रख सके तो उस के लिए यह आवश्यक है कि वह सर्वश्रेष्ठ विजय अर्थात् आत्मविजय प्राप्त करे। उस के लिए यह आवश्यक है कि वह अपनी क्रूरता और क्षुद्रता को छोड़ कर इस बात का अनुभव प्राप्त करे कि जिस प्रकार वह अपने स्वत्व और अधिकार बनाये रखना चाहता है उसी प्रकार दूसरे भी अपने अधिकारों को सुरक्षित रखना चाहते हैं। अर्थात् यदि उसे अपने अधिकारों का ज्ञान है तो उस के लिए दूसरे के अधिकारों का मान करना भी परम आवश्यक है। संक्षेप में नागरिकता का यही मूल सिद्धान्त है। जब मनुष्य अपने जीवन को इस प्रकार सुसंगठित करने में समथ हो जाता है और उसे इस बात का अनुभव हो जाता है कि अपने स्वत्व और अधिकारों में किसी प्रकार की कमी किये बिना जब वह दूसरों के स्वत्व और अधिकारों का मान कर सकता है और इस का फल अंत में उसी के लिए लाभदायक होता है तो हम यह कह सकते हैं कि वह सभ्यता की पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है। प्रकृति पर विजय प्राप्त कर लेना उस समय तक मनुष्य के लिए वास्तविक रूप से उपयोगी नहीं हो सकता जब तक मनुष्य इस विजय प्राप्ति के आधार पर अपने आप को श्रेष्ठ बनाने को चेष्टा न करे। जब तक वह इस पाञ्चभौतिक शरीर की आवश्यकताओं से अपनी प्रकृति को सुसंस्कृत न बना ले तथा जब तक अपनी बुद्धि के तेज और विकास द्वारा वह इस बात का अनुभव न प्राप्त कर ले कि इस संसार के निर्माता ने उस का स्थान परमोच्च बनाकर उस के लिए यह आवश्यक कर दिया है कि वह इस संसार में अपनी

श्रेष्ठता को सुरक्षित रखे और इस संसार के विधान में मनुष्योचित कार्य करता हुआ अपना जीवन अपने इस सर्वश्रेष्ठ उद्देश्य की प्राप्ति करने की चेष्टा में व्यतीत करे उस समय तक मनुष्य के लिए केवल प्रकृति पर विजय प्राप्त कर लेना ही उसकी उन्नति और सभ्यता की पराकाष्टा नहीं समझा जा सकता। संसार में मनुष्य का सब से श्रेष्ठ कर्तव्य यह होना चाहिए कि वह अपना धर्म तथा अपना कर्तव्य अपने कुटम्ब, अपने पड़ोसी, अपनी जाति, अपने देश और अपने निर्माता के प्रति पालन करे।

इति